ISSN – 2349-3100 Peer Reviewed

अष्टमोऽङ्कः Refereed Journal

अन्ताराष्ट्रियमूल्यांकितत्रैमासिकसन्दर्भितशोधपत्रिका

वेदज्योतिष्मती

Vedajyotishmati

संरक्षकाः

प्रो. रामचन्द्रझाः, प्रो. रामदेवझाः,

प्रो. देवेन्द्रमिश्रः, प्रो. शिवाकान्तझाः

प्रधानसम्पादकः

प्रो. हंसधरझाः

आचार्यः, ज्यौतिषविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

भोपालपरिसरः।

सम्पादकः

डॉ. आशीषकुमारचौधरी

असिस्टेंट-प्रोफेसर, ज्यौतिषविभागः,

क.जे.सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई।

प्रकाशकः

ज्ञानादेव तु कैवल्यम्

संस्कृत - अनुसंधान-संस्थानम्

संस्कृत-अनुसंधान-संस्थानम्, के. एम. टैंक लहेरियासरायः, दरभंगा

सम्पादकमण्डलम्

1 प्रो.बोधकुमारझाः
आचार्य, व्याकरण-विभाग,
क. जे. सोमैया-संस्कृतविद्यापीठ, मुम्बई ।

2 प्रो. हंसधरझाः
ज्योतिष विभाग ,आचार्य,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान , भोपाल परिसर, भोपाल।

3 प्रो. प्रमोदवर्धनकौण्डिल्यायनः,
विभागाध्यक्ष, मीमांसा दर्शन विभाग नेपाल,
नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय, काठमाण्डु, नेपाल ।

4 जूही जेनोजे
आचार्या,दर्शन विभाग,
कोरिया विश्वविद्यालय, सीओल, कोरिया ।

5 डॉ. प्रवेशसक्सेना
पूर्व आचार्या,संस्कृत विभाग,
जाँकिर हुसैन महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय।

6 डॉ. धनञ्जयमणित्रिपाठी
आचार्य ,संस्कृत विभाग,
मोदी विश्वविद्यालय, राजस्थान ।

7 डॉ. दिलीपकुमारझाः
विभागाध्यक्ष-धर्मशास्त्र विभाग
कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

8 डॉ. राजीवमिश्रः
प्राचार्य, सन्तनागपाल संस्कृतमहाविद्यालय,
एवं शोध संस्थान, सम्पूर्णानन्दसंस्कृत
विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

9 टेल्टो डेल्टेज
आचार्य दर्शन एवं संस्कृति विभाग,
हेल्डमार्ग विश्वविद्यालय,हेल्डनवर्ग, जर्मनी।

10 प्रो. विद्यानन्द झाः
प्राचार्य,
भोपाल परिसर, भोपाल।

पुनर्वीक्षणमण्डलम्

1. **आचार्यरामदेव झाः**
पूर्व आचार्य ज्योतिष विभाग,
लालबहादुर शास्त्री, राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली ।
2. **आचार्य नीलाम्बर चौधरी**
आचार्य रामभगत राजीवगाँधी महाविद्यालय दरभंगा।
3. **आचार्या प्रवेश सक्सेना**
आचार्या ,जाँकिर हुसैन महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय,दिल्ली।

प्रबंधक संपादक

1. श्री पंकज ठाकुर

परापर्शदातृसंपादकः

1. डॉ. रंजय कुमार सिंह
रा. सं. संस्थान, मुम्बई।

सहसंपादिका

1डॉ गीता दूबे ,रा. सं. संस्थान, मुम्बई।

सम्पादकसहायकः

श्रीसत्यनारायणः

वर्षम्- FEB 2016

@copy right – Sanskrit Anusandan Sansthan

Email – rsas.kothram@gmail.com, vjvv.rs@gmail.com
Ph No. 06272-224671, 09619269812, 07506137027

मूल्य-300/

पत्रिका में प्रकाशित लेखों से प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। विवाद का समाधान दरभंगा न्यायालय से ही स्वीकार्य है ।लेखों को परिवर्तित, स्वीकृत एवं अस्वीकृत करने का पूरा अधिकार प्रकाशक को होगा ।

A Trilingual Educational Sanskrit Research Journal Published by the Sanskrit Anusandhan Sansthan, Darbhanga

From letter no-671/2014-15 Place on Rashtriya Sanskrit Anusandhan Sansthan will kown as the Sanskrit Anusandhan Sansthan, Darbhanga

ISSN – 2349-3100

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
(मानितविश्वविद्यालय)
नैक द्वारा अ श्रेणी प्राप्त
मानव संसाधन विकास मन्त्रालय,
भारत सरकार के अधीनस्थ

RASHTRIYA SANSKRIT SANSTHAN
(DEEMED UNIVERSITY)
Accredited by NAAC with A Grade
Under Ministry of H. R. D,
Govt. of India

आचार्य वासुदेव शर्मा
संकाय प्रमुख(वेद वेदांग)

Prof.Vasudev Sharma
Faculty Head(Ved Vedang)

शुभाशंसनम्

वेदैः सह समुद्भूतं वेदचक्षुः सनातनम् इत्यादि- वाक्ये वेदविहितज्ञानोपलब्धये इन्द्रियार्थसन्निकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम् इति नियमेन प्रत्यक्षज्ञाने चक्षुरिन्द्रियस्य प्राधान्यं ज्योतिषशास्त्रस्य वेदचक्षुः किलेदं स्मृतं ज्योतिषम्। श्रेष्ठता चाङ्गमध्येऽस्य तेनोच्यते। संप्रतोऽपीतरैः कर्णनासादिभिश्चक्षुषाङ्गेन न किञ्चिका वेदचक्षूरूपेण निर्धारितत्वात् वेददृष्टिमयीयं शोधच्छात्राणां शोधनिर्देशकानां गवेषकानां, अनुसन्धित्सूनां एकां अभिनवां नूतनां दृष्टिं वैदिकज्ञानस्य ज्योतिर्मयी लोके विस्तारियिष्यतीत्याशया पत्रिकायाः प्रधानसम्पादकानां सम्पादकानां संरक्षकानाञ्चाभिनन्दनं कुर्वन् शुभाशंसनम् प्रकटयतीति।

माघशुक्लपौर्णिमा, सोमवासरः
वि. स. २०७२

भावत्कः
आचार्यवासुदेवशर्मा

 ISSN – 2349-3100

सम्पादकीयम्

सुमनसवाग् यथैव प्राचीनतमा तथैव नवनवोन्मेषशालितया नूतनतमेति विदितमेव सुरभारतीसमुपासकैः । अत्र विद्यमानमलौकिकज्ञानगङ्गाप्रवाहं विलोक्य कोनाम सहृदयो लोकोत्तराह्लादं न विन्दते। वेदादिवाङ्मयमहिममण्डितेयं सुरसरिन्निजगुणगवैशिष्ट्याादेव विश्वस्मिन्विश्वे विश्रुतमित्यपि निरापदम्। ज्ञानगङ्गाप्रवाहोऽसावनादिकालादेव वेदपुराणधर्मशास्त्रदर्शनादिग्रन्थमाध्यमेन, विविधमनीषिणां ग्रन्थपत्रिकादिमाध्यमेन चानवरतं लोकं पावयन् वरीवर्ति। ज्ञानगङ्गाप्रवाहोऽसौ नावरुद्ध्येत, वेदविद्याया अनुसन्धानात्मकं ज्ञानञ्च चिरं लोके प्रतिष्ठितं स्यादितिधिया प्रवर्तिताया लोकहितभावनाभरितायास्त्रैमासिक्या वेदज्योतिष्मतीपत्रिकाया अष्टमाङ्कोऽचिरादेव विदुषाङ्करकमलेषु सादरं समर्प्यत इति महान् सन्तोषः।

अङ्केऽस्मिन् संस्कृताङ्ग्लहिन्दीभाषोपनिबद्धा विविधशास्त्राणां प्रौढा निबन्धाः सन्ति विलसिताः । निबन्धा एते स्वस्वविषयान् ऋजुमार्गेण दृढबन्धेन सरलशब्दसुमनोगुम्फेन प्रस्तुवन्ति। नात्र सन्देहो यन्निबन्धैरेतैश्शास्त्रीयविषयविस्तरो भवत्येव प्रसारश्च सञ्जायते संस्कृतविद्यायाः । अस्माद्धेतोर्हर्षनिर्भरेऽस्मिन् क्षणे सम्पुटितपाणियुगलोऽहं विदुषो लेखकान् सविनयं प्रणम्यान्तर्मनसा तेषां प्रति कार्तज्ञं विनिवेदयामि । आशासे च यदेवमेव तेषाञ्चतुरचमत्कारकारिचटुला लेखनी निर्बाधं शास्त्रानुसन्धाने संस्कृतविद्याप्रचारे च प्रवर्ततामिति । आशासेऽष्टमाऽङ्कोऽयमपि पूर्ववदेव शोधच्छात्रोपकारी, पाठकानां स्वान्ताह्लादकारी स्यादिति। यतः पाठकानां तोष एव कस्यापि ग्रन्थस्य पत्रिकाया वा साफल्यं जनयति।

पत्रिकाया अस्याः प्रकाशने मुख्यकारणभूतोऽस्ति परमजिज्ञासुर्युवपण्डितः डॉ. आशीषकुमारचौधरीमहोदयः । राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य सोमैयापरिसरेऽध्यापयन्नप्यसौ पत्रिकाया अस्याः सम्पादनदायित्त्वं प्रामुख्येण सोत्साहं निर्वहति। एतदर्थं श्रीचौधरीमहोदयाय हृदयेनाशेषं साशीषं धन्यवादं प्रयच्छामि। क्रमेऽस्मिन् ते सर्वेऽपि अक्षरसंयोजकादिसहयोगिनः पत्रिकाप्रकाशनाधिकारिणश्चाभिनन्दनीयाः साधुवादार्हाश्च येषाममूल्यं योगदानं वेदज्योतिष्मतीपत्रिकाप्रकाशनरूपज्ञानयज्ञे सम्प्राप्तम्।

अन्ते च कामये भगवन्तं महाकालं यदेवमेव ज्ञानविज्ञानोद्भासकसारगर्भितविपश्चिल्लेखरञ्जिता पत्रिकेयं प्राकाश्यमधिगच्छन्ती अशेषकालं यावल्लोकानुरञ्जिनी स्यादिति शम्।

वेदज्योतिष्मतीत्यस्याः पत्रिकायाः सतां प्रियः ।
अष्टमाङ्कोऽपि लोके स्याच्चिरं चित्तानुरञ्जकः।।

गुणैकपक्षपातिनां सहृदयानां विदुषां शुभाशंसनमपेक्षमाणः-

(प्रो. हंसधर झाः)

प्रधानसम्पादकः

विषयसूची पृष्ठसंख्या

सम्पादकीयम्	प्रो.हंसधरझाः	4
तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात् (ब्रह्मसूत्र-१/१/७)	प्रो .बोधकुमार झा	6
पीयूषपिण्डः चन्द्रमाः	प्रो. वासुदेवशर्मा	7
प्राशस्त्यं गुरुशुक्रयोः-(उत्तरार्धम्)	प्रो. हंसधरझाः	9
ज्योतिषशास्त्रे नक्षत्रानुसारका ऋतुक्रमाः	डा. नारायणन्. ई. आर्.	12
वास्तुशास्त्रे दिक्साधनम्	डॉ.अशोकथपलियालः	15
पञ्चाङ्ग-साधनम्	अनिरुद्धनारायणशुक्लः	18
शिशुपालवधमहाकाव्ये ज्योतिषशास्त्रम्	डॉ जयप्रकाश नारायण	21
लोकतंत्र और शिक्षा के विकास में जनसंचार माध्यमों की भूमिका	डॉ. सुनीलकुमारशर्मा	24
योग के माध्यम से आध्यामिक विकास	डॉ.आरती शर्मा	27
कबीरदास और उनकी भाषा	डा. गीता दुबे	29
A Comparative study of Mental Health between Tribal and Urban Senior College Students Mumbai University	Dr. M. S. Gomchale & Andhale Shankar Baburao	32
Problem solving ability in Physics with special reference to analysis of data – A Survey on Secondary School Students.	Thushara Murali & **Dr. K.Rajagopalan	35
Study center of Sanskrit	Dr.Ashish kumar choudhary	38

ISSN – 2349-3100

तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात्(ब्रह्मसूत्र-१/१/७)

✍प्रो .बोधकुमार झा

{ तन्निष्ठस्य = 'सत्' के रुप में विद्यमान आत्मा को, मोक्षोपदेशात् – मोक्ष का उपदेश देने के कारण , सांख्यदर्शन सम्मत प्रधान को आत्मा शब्द का अर्थ नहीं माना जा सकता है।(शब्दार्थ) }

सांख्य दर्शन के साथ वेदान्त दर्शन का शास्त्रार्थ जारी है। वेद में आत्मा शब्द का प्रयोग प्रधान यानी प्रकृति के अर्थ में हुआ है इस बात को सिद्ध करने के लिये सांख्य वाले कहते हैं कि आत्मा शब्द केवल चेतन अर्थ में ही नही है , वह अचेतन अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। आत्मा पुरुष के लिये सारे काम करती है। जैसे सेवक स्वामी के सभी कार्यों का निष्पादन करता है, उस सेवक के लिये स्वामी कहता है- यह गैर नहीं , बल्कि मेरी आत्मा हैं। उसी तरह प्रधान भोग और मोक्ष को देता है तथा पुरुष उसे प्राप्त करता है।पुरुष के लिये प्रधान अत्यन्त उपकारक है। अत्यन्त उपकारक होने से पुरुष(आत्मा) प्रधान को अपनी आत्मा बताता है।अथवा जैसे एक ही " ज्योति" शब्द वेद में आग और यज्ञ के लिये व्यवहृत होता है , उसी तरह 'आत्मा' शब्द भी वेद में चेतन अर्थ और अचेतन अर्थ में मानना चाहिये। भूतात्मा और इन्द्रियात्मा का प्रयोग तो देखा ही जाता है । **"तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात्"** । आशय है कि श्वेतकेतु नाम के किसी मोक्षार्थी को वेद में उपदेश दिया गया है। उसे बताया गया है **" स आत्मा" "तत्त्वमसि श्वेतकेतो" "आचार्यवान् पुरुषो वेद तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ सम्पत्स्ये"(छान्दो०६/१४/२)।** अर्थात् तुम सत् थे, सत् हो, तुम आत्मा हो, जब तक ये बात नहीं जानोगे, तब तक तुझे मोक्ष नहीं मिलेगी। यहां श्वेतकेतु को सत् कहां गया है। यदि आत्मा शब्द अचेतन प्रधान के लिये होता , तो कहा जाता कि तुम अचेतन हो पर ऐसा नहीं कहा गया है । उसे सत् कहा गया , जो चेतन अर्थ को **व्यक्त** करता है। सेवक ओर स्वामी का जो दृष्टान्त दिया गया है, वह उचित नहीं है।क्योंकि सेवक और स्वामी में भेद है ही नही। कही भूतात्मा , इन्द्रियात्मा मे चेतन, अचेतन दोनों अर्थो को देखकर सभी जगह ऐसी ही कल्पना करना तर्क संगत नहीं है। ज्योति शब्द के दो अर्थ हैं, इसलिये आत्मा शब्द के भी दो अर्थ हैं, ऐसा मानने के लिये जो आग्रह है, वह ठीक नही है। जिन शब्दों के अनेक अर्थ होते हैं, उनके सारे अर्थ एक साथ समझे नही जाते। अपितु संगति के हिसाब से कोई एक अर्थ निर्धारित किया जाता है। पर जहाँ- जहाँ आत्मा शब्द का प्रयोग है, वहाँ – वहाँ प्रधान अर्थ समझने के लिये कोई प्रसङ्ग नही है, और न उससे मन्त्रार्थ की संगति ही बन पाती है।

तुम सत् थे, सत् हो, आत्मा हो, ये जब जान लोगे, तो मोक्ष मिल जायेगी। (वेद)

उक्त मन्त्र मे श्वेतकेतु को सत् , ईक्षण करने वाला , चेतन बताया गया है। चेतन- श्वेतकेतु की अचेतन की आत्मा नही हो सकती। अत: चेतन विषय ही आत्मा शब्द है, अचेतन विषय नहीं। इस तरह वेद में जहां भी मोक्ष के उपाय बताये गये हैं, सर्वत्र आत्मा को चेतन मानते हुए ही मन्त्र उपलब्ध होते हैं। उनको अपनी बात रखने के लिये प्रधान अर्थ में घसीटना शास्त्र के साथ अन्याय करना होगा।

आचार्य, व्याकरण-विभाग, क. जे. सोमैया-संस्कृतविद्यापीठ, मुम्बई।

ISSN – 2349-3100

पीयूषपिण्डः चन्द्रमाः

✍प्रो. वासुदेवशर्मा

भारतस्यास्तिकपरम्परायाः प्रतीकभूतः चन्द्रः बहुभ्यो युगेभ्यः अस्माकं निष्ठायाः आस्थायाश्चालोको विद्यते। आह्लादकतायाः शीतलतायाः च कारणं चन्द्रोऽयं बहोः कालादमृतवर्षी मन्यते, तथा दिवालोकस्य विशिष्टासु विभुतिषु वन्दनीयः एकः अनुपमो देवः सन् आराधनायाः मानबिन्दुः वर्तते । विधोरूर्ध्वभागे पितरो वसति इत्याद्युक्ता पितृणां निवासभूमिरियमेव । अतः प्राणिवर्गः चन्द्रं प्रति कृतज्ञ। प्रत्येकौ धर्मो सम्प्रदायो वा चन्द्रं प्रति तदीयया चिरन्तनया शक्त्याऽभिभूतो नतमस्तकः सन् तदीयान् गुणान् गायति। एषः चन्द्रः रात्रौ स्वकीयैःकामनीयैः किरणैः वनस्पतीन् पादपान् लतानंषधीः च संस्पृश्य परिषिञ्चति। तस्मात् स औषधीषः इति कथ्यते। तस्मिन् निवीनम् लाञ्छनम् तं शशलाञ्छननाम्नाऽवबोधयति। कलाभिः द्वारा वृद्धेः कारणात् क्षयपूर्णः इति संज्ञाद्वाभ्यामपि व्यवह्लीयते। समुद्रेषु जलवृद्धेः कारणत्वात् जले विशिष्टप्रभावत्वाच्च समुद्रप्रगोऽपि निगद्यते।

चन्द्रोत्पत्तौ विभिन्नानि मतान्तराणि सन्ति। परन्तु भारतीयज्योतिषशास्त्रे वेदाङ्गं तथा वेदेषु- चन्द्रमा मनसो जातः (ऋग्वेदः १०.०९.१०) इति कथयित्वा चन्द्रः ब्रह्मणः मनसः उत्पन्नः इति प्रतिपादितम्। जैमिनीयोपनिषदि तथा महाभारतस्य शान्तिपर्वणः चतुःषष्ठ्यधिकत्रिंशत्तमेऽध्याये नरनारदयोः सम्वादे नारदं प्रति उक्तिरस्ति -

तस्माज्ज्योत्तिष्ठते देवात् सर्वभूतमतम्।
चन्द्रमा येन संयुक्तः प्रकाशगुणधारणः॥इति।

वैज्ञानिकेषु अपि अस्य समुत्पत्तिविषये विरोधाभासः आसीत् । परन्तु उत्तरकालिकैभारतीयमनिषिभिः वेदादिशास्त्राणां आधारेण निर्णितं यत् चन्द्रोऽयं न पृथिव्या उत्पन्नो न च चन्द्रात् पृथ्वी । अपि तु निःसंशयं चन्द्रो जल गोलोऽस्ति। तथा अपां गभीरया स्थापनाया निःसृतोऽस्ति। यथा हि तैत्तिरीयब्राह्मणे चन्द्रमा वा अपां पुष्पं तथा ताण्ड्यब्राह्मणे अपां पुष्पमसि इत्यादिवचनैः चन्द्रस्योत्पत्तिरदभ्य एव जाता इति स्पष्टम्।ज्योतिषशास्त्रे तु भास्करेण शिरोमणौ कथितम् -

तरणिकिरणसमादेष पीयूषपिण्डदिनकरदिशि च चन्द्रिकाभिश्चकास्ति।
तदितरदिशि बालाकुन्तलश्यामश्रीर्घट इव निजमूर्तिह्वा पयेवातपस्या॥

कमलाकरभट्टः निगदति -

तेजसां गोलकः सूर्यः अगः चन्द्रपीयूषपिण्डः प्रोक्तः। च ग्रहक्षाण्यम्बु गोलका प्रभवन्तो हि दृश्यते सूर्यरश्मिः प्रतिपादिता। इत्यादिवाक्यैः जलमयं गोस्वरूपमेयो पपादितं। अत्र एकं तथ्यमिदमपि अस्ति यत् अस्य कस्यापि नाम परीक्षणेन तस्य वास्तविकतायाः विषये ज्ञानं भवति। यतो हि लोके नाम्नाधारेण तदगुणानामाकलनं क्रियते एव। अनया दृष्ट्या हरिवंशपुराणे चन्द्रस्य केषाञ्चिद् नाम्नामेकत्र संकलनं दरीदृश्यते। तेषु च नामषु चन्द्रसम्बिढिनोऽनेके गुणाः ध्वनिता भवन्ति। तथा हि -

श्वेतभानु हिमतनु ज्योतिषाधिप शशि अब्दकृत कालयोगात्मा ईक्ष्यो यज्ञरसोऽव्ययः।
ओषधीशः क्रियायोनिरम्भोनिधिषुण्भाक् शितांशु स्मृताधारश्चपलः श्वेतवाहनः॥

एतेषु नामसु ज्योतिषाधिपः इति कथनम् विशिष्टमहत्त्वपूर्णः अस्ति। यतोहि सर्वत्राऽपरत्र सूर्य एव ज्योतिष्कानां अधिपति प्रोक्तः । अस्य च समाधानं नीलकण्ठेन स्वटीकायां ददता कथितं यत् सूर्य एव ज्योतिष्कानां अधिपतिः परं चन्द्र सूर्यस्यापीश्वरः। यथा पार्थिवकाष्ठो वहने व्यर्थकस्तथा चान्द्रं जलं सर्वेषामाकाशिय पदार्थानां (येषां ईन्धनं जलं वर्तते) वर्धकमस्ति। अयमाशयो यत् सूर्यस्य तेजो विवृद्धये चान्द्रजलमेवोपश्यते। तत्रैव तैत्तिरीयोपनिषदि इदं वाक्यं चन्द्रमसा सर्वापि ज्योतिषी महीयन्ते। उपर्युक्तस्य भारतीयमतस्य पुष्टिं विधत्ते एवमकत्रापि नैकानि वचनानि सन्ति यानि विस्तारभयान्नमया अत्र नोपपद्यते। यानि स्पष्टं चन्द्रस्य रूपं सूचयति परं तानि सर्वाण्यद्य चन्द्रधरातलं स्पृष्टवतां भौतिकानुसन्धानमेव सत्यं स्वीकुर्वन् कथनेन ततः आनीतं मृत्तिका शिलाखण्डादिभिश्चाऽसत्यामिव

प्रतिभाति। परन्तु अत्यधिकस्वरूपदृष्ट्या तत्सर्वमेकाङ्गिसत्यमेव। यतोऽप्यस्मिन् विषये विशिष्य विमर्ष आवश्यकः। शास्त्रेऽस्मिनकालख्य पुरुषः एव ब्रह्म स्वीकृतम्। ग्रहाणां रश्मिवंशादेव तथा तेषां विभिन्नविभिन्न काले विभिन्नविभिन्नांशीयकोणेषु स्थितिवशादेव अस्य पुरुषस्योत्तममध्यमोदासीनाधमा चत्वारः भेदाः स्वीकृताः सन्ति। त्रिगुणात्मकरूपेयं सृष्टिः इति स्वीकृतः। त्रिभिर्गुणैव्याप्तिमिदं समस्तं जगद् सत्त्वरजस्तमोमयमस्ति। सौरमण्डलीयग्रहेष्वपि सत्त्वरजस्तमोगुणानां सत्ता ज्योतिषशास्त्रे स्वीक्रियते। येषु ग्रहेषु सत्त्वगुणस्य सत्ता वाऽधिक्यं तेषां रश्मयः अमृतरश्मयः भवन्ति। रजोगुणाधिक्यवतां रश्मयः अमृतविषतत्त्वैः मिश्रिता भवन्ति। तथा च येषां ग्रहाणां तमोगुणाधिक्यवतां रश्मयः विषरश्मयः भवन्ति। इत्थं पृथ्व्यां सर्वत्र शुभाशुभत्वनिर्धारणे प्रकृतिदृष्ट्या व्यक्ति दृष्ट्या प्राणिभागदृष्ट्या वा ग्रहरश्मयः एव प्रभावोत्पादकाः भवन्ति। आकाशे प्रतिक्षणं अमृतरश्मयः सौम्यग्रहाः विषरश्मयः क्रूरग्रहाः व रस्मिमण्दलस्य विभिन्नप्रदेशैः भूमण्डलस्य विभिन्नप्रदेशेभ्यः सम्बन्द्धारसन्तो भूमण्डलस्थ तत्ततदेशीयमानवान् जलजान् स्थलान् उद्भिदान् वनस्पति जगद् प्राकृतिकवातावरणम् जलवायू च सकलमपि पृथ्व्यां वस्तुजातं यत् किञ्चिदपि विद्यते तत्सकलं प्रभावयन्ति नास्ति यत्र शङ्कापङ्ककलङ्कावसरः। आचार्यवराहमिहिरस्य सिद्धान्तानां तन्नेदं स्पष्टं परिज्ञायते यत् शरीरकमेव ग्रहकक्षावृत्तमस्ति। अस्यैवकक्षावृत्तस्य **शीर्षमुखबाहुहृदयोदराणि कटिवस्तिगुह्यसंज्ञानि । ऊरू जानू जङ्घे चरणाविति राशयोऽजाद्याः।।** सिद्धान्तेन द्वादशराशिषु भ्रमन्तो ग्रहाः एव –

आत्मा रविः शीतकरस्तु चेतः सत्त्वं धराजः शशिजोऽथ वाणी ।
ज्ञानं सुखं चेन्द्रगुरुर्मदश्च शुक्रःशनिःकालनरस्य दुःखम् ।।

तात्पर्यो अयं विद्यते यत् वराहमिहिराचार्येण सप्तग्रहान् द्वादशराशीनाम् स्थितिः कालपुरुषस्य विविधांगेषु स्वीकृत्य **देहदाहधारी प्राणिनामन्तः एव निदृष्टास्ति ।शरीरस्थितसौरचक्रस्य भ्रमणम् आकाशीय सौरमण्डलस्य नियमानामाधारमनुसृत्यैव भवति। इत्थम् ज्योतिषशास्त्रम् व्यक्तसौरमण्डलस्य ग्रहाणाम् गति स्थिति स्वरूपञ्च प्रकटीकरोति ।एवञ्च स्त्रीपुरूषौ प्रकृतिपुरूषौ वा चन्द्रसूर्याविव इति** स्वकृत्य पञ्चतत्त्वरूपाः अन्ये च पञ्च भौमबुधगुरूशुक्रशनिग्रहाःस्वीक्रियन्ते।एवम् प्रकृतिपुरुषयोः पञ्चतत्त्वानाम् सहयोगेनैव सम्बन्धेन च समस्त सौरमण्डलम् पृथ्वीमण्डलञ्च प्रभावितम् सत् भ्रमती ।

इत्थमन्ते अस्माभिः सविश्वसम् वक्तुम् शक्यते यत् भारतीय ज्योतिषशास्त्राचार्यैः प्रयोगशालानामभावे अपि स्वदिव्ययोगबलमाध्यमेन यत्पिण्डं तद् ब्रह्माण्डे इति मूलतत्त्वं विज्ञाय आभ्यान्तर सौरमण्डलस्य सम्पूर्णं दर्शनम् विधाय आकाशीयसौरमण्डलस्य सर्वेषांम ग्रहाणां गति स्थिति स्वरूपादयः निर्धारिताः तेषाञ्च भूमण्डले प्रभावस्य, भूमण्डलस्थ प्राणिभागोपरि प्रभावस्य च सांगोपांगम् विवेचनं ज्योतिषशास्त्रे प्रस्तुतमित्यतम्।

सन्दर्भसूची-

सिद्धान्तशिरोमणिः
सिद्धान्तशिरोमणिः
ऋग्वेदः-10.910
जैमिमनीयोपनिषद्-2-2-2
महाभारतम् शान्तिपर्व अ-364
तैत्तरीयब्राह्मणे-1.3.8
सिद्धान्तशिरोमणिः.गोलाध्यायः
सिद्धान्ततत्तवविवेके
हरिवंशपुराणम्-245-7-8
नीलकण्ठदैवज्ञवचनम्
तैत्तिरीयोपनिषद्1.2
लघुजातकम्-1-4
लघुजातकम्-2-1

आचार्यः अध्यक्षः (ज्योतिषम्)
जयपुरपरिसरः

प्राशस्त्यं गुरुशुक्रयोः-(उत्तरार्धम्)

✍प्रो. हंसधरझाः

अथ गुरुर्यदि सिंहराशौ मकरराशौ वा भवेत्तदापि उक्तानि कार्याणि न विधेयानीति सामान्यो नियमः। यथा रामाचार्यः – **अस्ते वर्यं सिंहनक्रस्थजीवे वर्यं केचिद् वक्रगे चातिचारे।**[24]

परन्त्वत्र सिंहस्थगुरोः प्रकारत्रयेण परिहारोऽपि प्रतिपादितः श्रीरामचार्येण –

सिंहे गुरौ सिंहलवे विवाहो नेष्टोऽथ गोदोत्तरतश्च यावत्।
भागीरथीयाम्यतटे हि दोषो नान्यत्रदेशे तपनेऽपि मेषे।।[25]

अर्थात् सिंहराशिस्थो गुरुर्यदि सिंहस्यैव नवांशे भवेत्तदा कस्मिँश्चिदपि देशे विवाहादिकं न कार्यम्। यथा राजमार्तण्डे – **सिंहे राशौ तु सिंहांशे यदा भवति वाक्पतिः।**
सर्वदेशेष्वयं त्याज्यो दम्पत्योर्निधनप्रन दुष्यति।[26]

तृतीयश्च परिहारोऽयं यत् – सूर्यौ यदा मेषराशौ भवेत्तदा सिंहस्थो गुरुः कस्मिँश्चिदपि देशे न दोषकारकः। एवमुपर्युक्तसिंहस्थगुरुविषये सारार्थरूपेण लिखति श्रीरामाचार्यः –

मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः।
गङ्गागोदान्तरं हित्वा शेषाङ्घ्रिषु न दोषकृत्।।
मेषेऽर्के सन व्रतोद्वाहो गङ्गागोदान्तरेऽपि च।
सर्वः सिंहगुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौडगुर्जरे।।[27]

एतेन स्पष्ट यत् कलिङ्गगौडगुर्जरप्रान्तेषु गङ्गागोदावर्योर्मध्यस्थदेशेषु च समस्तः सिंहराशिस्थो गुरुस्त्याज्यः। एतदतिरिक्तदेशेषु गुरुर्यदा चत्वारिंशत्कलाधिकषोडशभिरंशैरधिको भवति तदा दोषकारको न भवति। तथा कलिङ्गगौडगुर्जरान् विहायान्यदेशेषु सिंहस्थे गुरावपि शुभकार्याणि भवन्तीति।।

अथ च मकरस्थे गुरुर्यस्त्याज्यः कथितस्तस्यापि परिहारः प्रतिपादित आचार्येण। यथा –

रेवापूर्वे गण्डकीपश्चिमे शोणस्योदग्दक्षिणे नीच इज्यः।
वर्ज्यो नायं कौङ्कणे मागधे च गौडे सिन्धौ वर्जनीयः शुभेषु।।[28]

अर्थाद् रेवा (ज्वालापुरमण्डले नर्मदानाम्ना प्रसिद्धा) नद्याः पूर्वभागे, गण्डक्याश्च पश्चिमे, तथा शोणनद्या उत्तरस्यां दक्षिणस्यां च दिशि, नीचस्थो गुरुर्नैव वर्जितः। नीचस्थो गुरुरयं कौङ्कणदेशे (भारतस्य दक्षिणभागे) मगधदेशे (पाटलिपुत्र-गया-शाहाबादादिप्रदेशेषु) गौडदेशे सिन्धुदेशे च दोषकारको भवति। अर्थान्नीचस्थे गुरौ शुभकर्म त्याज्यमिति। अथोपनयनादिशुभकार्येषु जन्मराशिवशादपि गुरुबलमपेक्षितं भवति। तत्र रामाचार्येण लिखितं यज्जन्मकालिकचन्द्राक्रान्तराशितो गोचरीयो गुरुर्यदि नवमपञ्चमैकादशद्वितीयसप्तमान्यतमस्थाने भवेत्तदा शुभकारकः, यदि दशमषष्ठतृतीयैकादशगः स्यात्तदा शान्त्या शुभो भवति, चेच्चतुर्थाष्टमद्वादशगो भवेत्तदाऽशुभकारको भवति। यथा – **वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः।**

श्रेष्ठो गुरुः षट् त्र्याद्ये पूजयाऽन्यत्र निन्दितः।।[29]

परन्तु केषाचिन्मते द्वितीयपञ्चमसप्तमनवमैकादशस्थानगतो गुरुः शुभः, चतुर्थदशमद्वादशस्थानगतः शान्त्या शुभः, प्रथमतृतीयषष्ठाष्टमस्थानगतश्च निषिद्धो भवति। अत्र गुरुदौष्ट्यापवादं प्रतिपादयँल्लिखति रामाचार्यः –

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः। रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन्।।[30]

अर्थाद् गुरुर्यदि स्वोच्चराशौ स्वभवने स्वमित्रभवने स्वनवांशे वर्गोत्तमनवांशे वा भवेत्तदा अशुभस्थानस्थः सन्नपि शुभकारको भवति। किञ्च स्वनीचस्थः शत्रुभवनस्थो वा गुरुरुपर्युक्तशुभराशिस्थः सन्नपि अशुभफलदो भवति।

अथ च शुक्रो हि द्विरागमनयात्रादिषु विशेषेण विचारणीयो भवति। तत्र शुक्रो गन्तव्यदिगभिमुखेऽथवा दक्षिणभागे भवेत्तदा गन्ता न गच्छेत्। यदि गच्छेत्दा बालो म्रियते, गर्भिणी गर्भस्रावती भवति, तथा नूतनपरिणीता वन्ध्या स्यात्। अतः शुक्रः पृष्ठे वामे वा भवेदिति। यथोक्तमपि रामाचार्येण –

दैत्येज्यो ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्याद् गच्छेयुर्नहि शिशुगर्भिणीनवोढाः
चेद् वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा।।[31]

अत्र अस्तङ्गते शुक्रे द्विरागमादीनां निषेधः कृतः। अर्थादुदिते शुक्र एव द्विरागमादिकार्याणि विधेयानि। यथा बादरायणः –

अस्तं गते भृगोः पुत्रे तथा सम्मुखमागते। नष्टे जीवे निरंशो वा नैव सञ्चालयेद् वधूम्।।
गर्भिण्या बालकेनापि नववध्वा द्विरागमे। पदमेकं न गन्तव्यं शुक्रे सम्मुखदक्षिणे।।[32]

अत्र नवोढाशब्देन द्विरागमने गन्त्री इत्यभिप्रेतमस्ति, न तु वधूप्रवेशकर्त्री इति। यतो वधूप्रवेशे शुक्रविचारो नापेक्षितः। यथा – **नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः।**
नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्नहि।।[33]

अथ केषाञ्चिन्मते सम्मुखशुक्रो युवतीनां स्त्रीणां कृते न दोषकारकः। अर्थाद् या खलु द्विरागमने गन्त्री सा चेत्कुचरजोधर्मवती स्यात् तदा तस्याः कृते न दोषकारकः सम्मुखशुक्रोऽपि। यथोक्तमपि चण्डेश्वरेण –

पित्र्यागारे कुचकुसुमयोः सम्भवो वा यदि स्यात्। पत्युः शुद्धिर्न भवति रवेः सम्मुखो वाऽथ शुक्रः।।
तूले लग्ने गुणवति तिथौ चन्द्रताराविशुद्धौ। स्त्रीणां यात्रा भवति सफला सेवितुं स्वामिसद्म।।[34]

वादरायणेनोक्तं यद् भृग्वङ्गिरोवत्सवशिष्ठकश्यपात्रिवंशोत्पन्नानां तथा भरद्वाजवंशोत्पन्नानां कृते प्रतिशुक्रसम्भवो दोषो न बाधकः यथा – **कश्यपेषु वशिष्ठेषु चात्रि भृग्वङ्गिरःसु च।**
भरद्वाजेषु वात्स्येषु प्रतिशुक्रो न दुष्यति।।[35]

अत एव श्रीरामाचार्योऽपि पूर्वोक्तं परिहारद्वयमपि श्लोकेनैकेन प्रतिपादयति मूहूर्त्तचिन्तामणौ द्विरागमनप्रकरणे –

पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्पसम्भवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसम्भवः।
भृङ्ग्वगिरो वत्सवशिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा।।[36]

अत्र विचारणीयोऽयं विषयो यद् द्विरागमे शुक्र उदितो भवेत् परन्तु सम्मुखस्थो दक्षिणस्थो वा न भूयादित्यत्र किं कारणम् ? अत्र कारणमिदं यच्छुक्रग्रहः (कन्दर्पस्या) धिष्ठाता विद्यते। अतः शुक्रो यदि स्त्रियः सम्मुखे दक्षिणे वा भागे भवति तदा तां स्त्रीं शुक्रेण व्यथितां करोति। चेत् स्त्री स्वयं कुचपुष्पवती भवति तदा तु तस्यां शुक्रस्य साम्राज्यं निसर्गतो भवत्येव, अतस्तस्यामवस्थायां तस्यै शुक्रग्रहाच्छुक्रविकारस्याशङ्का न कल्प्यते। अत एवाचार्यैः यौवनत्वङ्गतायाः स्त्रियो द्विरागमे सम्मुखशुक्रेणापि दोषाभावः प्रतिपादितः।

अद्यत्वे प्रायो दृश्यते यत् स्त्रियः कुमार्यवस्थायामेव यौवनलक्षणलक्षिता भवन्ति। तदनन्तरं हि तासां विवाहो जायते। एवं परिस्थितौ तासां द्विरागमने उक्तवचनानुसारं प्रतिशुक्रविचारो नापेक्षितः। परन्तु प्रायो लोकव्यवहाराच्छास्त्रमर्यादायाश्चांशिकरक्षार्थं युवत्या अपि स्त्रियो द्विरागमे शुक्रस्य विचारः क्रियते एव।

अथ सम्मुखशुक्रस्य परिहारः शुक्रान्धविहितनक्षत्रैरपि दृश्यते शास्त्रेऽत्र। तत्र रेवतीनक्षत्रादारभ्य मृगशिरानक्षत्रं यावच्छुक्रोऽन्धो भवति। तेषु शुक्रान्धनक्षत्रेषु सम्मुखो दक्षिणो वा शुक्रो दोषकरो न जायते। तद्यथा –

रेवत्यादिमृगान्त्येषु यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सम्मुखस्थो न दोषकृत्।।[37]

एवमेव ज्यौतिषशास्त्रे गुरुशुक्रयोरनयोर्बाहुल्येन प्राधान्येन च दृश्यते विचारो, यः खलु निखिलोऽपि नैव प्रतिपादयितुं शक्यतेऽस्मिँल्लघुशोधपत्रे। किन्त्विदं तु स्पष्टमेव यद् गुरुभार्गवाविमावस्माकं जीवनेऽत्यन्तमुपयोगिनाविति।

पादटीप्पणी-

24मु.चि.शु.प्र. 48
25मु.चि.शु.49
26मु.चि.शु.प्र. 49 मणिप्रभाटीका
27 मु.चि.शु. 50-51
28मु.चि.शु.प्र. 52
29मु.चि.सं. 46
30 मु.चि.सं.प्र. 47
31मु.चि.द्वि.प्र. 2
32मु.चि.द्वि.प्र. 2 पीयूष
33मु.चि.द्वि. 3
34मु.चि.द्वि. 3
35मु.चि.द्वि.4 पीयूष
36मु.चि.द्वि. 4
37मु.चि.द्वि. 4 मणि.प्र.

शोधनिबन्धेऽस्मिन् गृहीतसाहाय्यग्रन्थानां सङ्केतः

1. ज्यौतिर्विज्ञानम्, अर्कयोमयाजी धूलिपालः, डाइरेक्टर, रिसर्चइन्स्टीयूट वाराणसेय संस्कृत वि.वि. वाराणसी, 1994 ई.
2. बृहद्दैवज्ञरञ्जनम्, डॉ. मुरलीधरचतुर्वेदी, मोतीलालबनारसीदासः, दिल्ली 1984 ई.
3. मुहूर्त्तचिन्तामणिः, श्रीकपिलेश्वरशास्त्री, चौखम्बा अमरभारतीप्रकाशन, वाराणसी 1982 ई.
4. मुहूर्त्तचिन्तामणिः, पं.केदारदत्तजोशी, मोतीलालबनारसीदास चौक वाराणसी, 1979 ई.
5. लघुपाराशरी, श्री अनूप मिश्रः गङ्गाविष्णुश्रीकृष्णदासस्टीमप्रेस-कल्याण, मुम्बई, 1990 ई.
6. सिद्धान्तशिरोमणिः, भारस्कराचार्यः, चौखम्बासंस्कृतसीरीज आफिस, वाराणसी
7. सूर्यसिद्धान्तः, कपिलेश्वरशास्त्री, चौखम्बासंस्कृतसीरीज आफिस, वाराणसीए

आचार्यः, ज्योतिषविभागः राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, भोपालपरिसरः

ज्योतिषशास्त्रे नक्षत्रानुसारका ऋतुक्रमाः

✍डा. नारायणन्. ई. आर्.

हस्ताब्जाधारघोरप्रकटितविपुलप्रोल्लसच्छस्त्रजाल-
क्षेपक्षेमत्रिलोकप्रसृमरविनुतानुग्रहोपात्तरूपाम्।
शूलाग्रोग्रप्रहारप्रणिहतमहिषप्रोद्वहत्प्रौढिपूर-
प्रेङ्घद्वात्सल्यभक्ताशयशयनचणामम्बिकामाश्रयेऽहम्।।

नक्षत्राणां समूहापेक्षया प्रत्येकज्योतिष्ट्वम्

लागधं[1] हि वेदाङ्गज्योतिषाभिधं प्रसिद्धं लोके वेदानुगं नक्षत्राणां प्रत्येकज्योतिष्ट्वमामनुते। वर्षादिकालगणनायां हि चान्द्रसौर्याद्यासु यद्यपि सिद्धासु, नक्षत्रवर्षादिकालगणना तत्सरणौ प्रामुख्यं बिभ्रती राराज्यते। पञ्चाङ्गादिनिर्मितौ रेवतीनक्षत्रान्तमश्विनीप्रारम्भं गणनं तावत्प्रसिद्धम्। सूर्यसिद्धान्तादिषु तथाऽनेकेष्वपि ग्रन्थेषु सरणिस्तादृशी तावदुपरचिता ज्योतिर्विदां बोधपदवीमुपारूढा च। राशयस्तु नक्षत्राणां वियदर्पितदृष्टिभिर्नरैरवलोकनप्रायावर्तुलप्रान्तेषु नियतस्थानानामिति प्रत्यक्षमेव प्रमाणम्। सम्पूर्णमपि वियच्चक्रवालं सप्तविंशेन विभागेन परिकल्पितं तत्तन्नेतृनक्षत्रनामपरिकल्पितव्यवहारं ज्योतिर्वीक्षणं क्रोशादिदूरमापकमिव स्वर्गस्येत्यालङ्कारिकाः कल्पयन्तितमाम्। नक्षत्रवीक्षणसम्प्रदायस्तु वर्णनापुरस्सरं प्रसिद्धस्तैत्तिरीयब्राह्मणादिषु।

किञ्चैवं नक्षत्राणामवस्थितौ विशाले हि वियति, वराहमिहिरस्य पञ्चसिद्धान्तिकायामुक्तम्-

“**आश्लेषार्धादासीद्यदा निवृत्तिः किलोष्णकिरणस्य।युक्तमयनं तदाऽऽसीत् साम्प्रतमयनं पुनर्वसुतः।।**” इति सूर्यनिवृत्तिराश्लेषानक्षत्रमध्याद्यदा पूर्वमासीत्तदयनं परिवृत्य साम्प्रतं पुनर्वसुतो नक्षत्रात्तन्निवृत्तिरित्येव स्पष्टम्। अपि च तत्रैवोक्तं वराहमिहिरेण-

“**आश्लेषार्धाद्दक्षिणमुत्तरमयनं रवेर्धनिष्ठायाम्।नूनं कदाचिदासीद्येनोक्तं पूर्वशास्त्रेषु।।**” इति। तत्राप्युक्तम्-

“**साम्प्रतमयनं सवितुः कर्कटकाद्यं मृगादितश्चान्यत्।उक्ताभावो विकृतिः प्रत्यक्षपरीक्षणैर्व्यक्तिः।।**” इति।

सोमाकरेणापि लगधेन वेदाङ्गज्योतिषे गर्गोक्तिरुक्ता यथा-

“**यदा माघस्य शुक्लस्य प्रतिपद्युत्तरायणम्। सहोदयं श्रविष्ठाभिः सोमार्कौ प्रतिपद्यतः।।**” इति।

अपि च भट्टोत्पलेन बृहत्संहितव्याख्यानावसरे[2] गर्गोक्तिः सूच्यते यथा- **“श्रविष्ठाद्यात् पौष्णार्धं चरतः शिशिरः।”** इति। माघादारभ्य ऋतुत्रयेणायनमेकं भवतीति कोषकर्तुरमरस्य वाक्यम्। यथा-“**द्वौ द्वौ माघादिमासौस्यादृतुस्तैरयनं त्रिभिः।**” इति। ऋतुक्रमस्तुयथा वेदाङ्गज्योतिषे बृहत्संहितादिषु वा तथैवायुर्वेदे सुश्रुतवाग्भटादिरचनासु संहितासु पुनरष्टाङ्गहृदयसूत्रस्थानादिष्वपि[3] द्रष्टव्यम्।

महाभारते स्वच्छन्दो भीष्ममृत्युः

भीष्मपितामहस्य मृत्युः स्वच्छन्दस्तस्माच्छरशय्यायां भीष्मोऽतिमानुषप्रभावो निजमृत्युकालाय सूर्यं प्रतीक्षते। सूर्यो यदा शिशिरर्तोरुदक् प्रतिनिवर्तते तदा स कालो माघस्य मासस्यार्धस्तं मुहूर्तमेव भीष्मो निजमृत्युं प्रतीक्षते, वृणोति च। तदुक्तमनुशासनपर्वणि महाभारते[4] व्यासेन यथा-

"दिष्ट्या प्राप्तोऽसि कौन्तेय सहामात्यो युधिष्ठिर। परिवृत्तो हि भगवान् सहस्रांशुर्दिवाकरः।।26।।
अष्टपञ्चाशतं रात्र्यः शयानस्याद्य मे गताः। शरेषु निशिताग्रेषु यथा वर्षशतं तथा।।27।।
माघोऽयं समनुप्राप्तो मासः सौम्यो युधिष्ठिर। त्रिभागशेषः पक्षोऽयं शुक्लो भवितुमर्हति।।28।।" इति।

शिशिरर्तुः श्रविष्ठारम्भे सम्भवति। आश्लेषमध्यकाले ग्रीष्मर्तुश्च। उक्तं हि लगधस्य वेदाङ्गयाजुषज्योतिषे यथा- **"प्रपद्येते श्रविष्ठादौ सूर्याचन्द्रमसावुदक्। सार्पार्धे दक्षिणार्कस्तु माघश्रवणयोः सदा।।7।।"** इति।

अपि च लगधस्य ऋग्वेङ्गज्योतिषे यथा-

"स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ। स्यात् तदादि युगं माघस्तपः शुक्लोऽयनं ह्युदक्।।5।।" इति।

उक्तं च तत्रैव-**"अग्निः प्रजापतिः सोमो रुद्रोऽदितिर्बृहस्पतिः। सर्पाश्च पितरश्चैव भगश्चैवार्यमाऽपि वा।।25।।"** इति।

सूर्यसिद्धान्तानुसारं ऋतुचक्रम्

ऋतवः	मासाः	नक्षत्राणि येषु पौर्णमी भवति
शरत्	कार्त्तिकःOct-Nov	कृत्तिका, रोहिणी
हेमन्तः	मार्गशीर्षःNov-Dec	मृगशिराः, आर्द्रा
	पौषःDec-Jan	पुनर्वसुः, पुष्यः
शिशिरः	माघःJan-Feb	आश्लेषा, मघा
	फाल्गुनःFeb-Mar	पू.फाल्गुनिः, उ. फाल्गुनिः, हस्तः
वसन्तः	चैत्रःMar-Apr	चित्रा, स्वाती
	वैशाखःApr- May	विशाखा, अनुराधा
ग्रीष्मः	ज्येष्ठःMay-Jun	ज्येष्ठा, मूलम्
	आषाढःJun-Jul	पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा
वर्षा	श्रावणःJul-Aug	श्रवणम्, श्रविष्ठा
	भाद्रपदःAug-Sep	शतभिषक्, पू.भाद्रपदम्, उ. भाद्रपदम्
शरत्	आश्विनःSep-Oct	रेवती, अश्विनी, अपभरणी

तैत्तिरीयब्राह्मणेऽप्युक्तम्[5]-**"कृत्तिस्वग्निमादधीत। मुखं वैतन्नक्षत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। मुखं वैतदृतूनां यद्वसन्तः।।"** इति।

"देवगृहा वै नक्षत्राणि। कृत्तिकाः प्रथमम्। विशाखे उत्तमम्। विशाखयोश्च[6] इति छन्दसि द्विवचनम्। अनुराधा प्रथमम्। अपभरणीत्युत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि तानि दक्षिणेन परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि तान्युत्तरेण।" इति[7]। आश्वलायनगृह्यसूत्रेऽप्युक्तम्[8]-"हेमन्तशिशिरयोश्चतुर्णाम्" इत्यादि।

इत्थं चाश्वलायनगृह्यसूत्र-तैत्तिरीयब्राह्मण-ऋग्वेङ्गज्योतिष-[वेदाङ्गयाजुषज्योतिष]-महाभारत-बृहत्सं-हिता-अष्टाङ्गहृदयसूत्रस्थान-पञ्चसिद्धान्तिकादिषु ग्रन्थेषु ऋतुक्रमविषयः प्रतिपादितः सोऽत् स्थालीपुलाक-न्यायेन निदर्शितमित्यन्यत्र विस्तर इत्योम्।।

पादटिप्पणी

1.वेदाङ्गज्योतिषम्, लगधमुनिप्रणीतम्, शिवराजः आचार्यः कौण्डिन्यायनः, विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला-158, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2005, रु.350.

2. बृ.सं.3-1.

3.अष्टाङ्गहृदयम्-3.2

4.महा.अनुशा.167.

5.तैत्तिरीयब्राह्मणम् 1.2.6

6.पा. सू.1-2-62.

7.तैत्तिरीयब्राह्मणम्-I.5.2.7

8.The Āśvalāyana Gṛhyasutram, with Sanskrit Commentary of Nārāyaṇa, Narendra Nath Sharma, the University of California, Eastern Book Linkers, 1976.

पुस्तकसूची

1. The Ashtadhyayi of Panini, Sumitra M. Katre, Austin: University of Texas Press, 1987. Reprint Delhi: Motilal Banarsidass, 1989. ISBN 0-292-70394-5.
2. The Ashtadhyayi of Pāṇini, Translated into English by Srisa Chandra Vasu, Published by Sindhu Charan Bose, at the Panini Office, Benares, 1897.
3. The Ashtadhyayi of Panini, with the Kashika commentary, and the Nyasa and Padamanjari commentaries on the Kashika.
4. The Āśvalāyana Gṛhyasutram, with Sanskrit Commentary of Nārāyaṇa, Narendra Nath Sharma, the University of California, Eastern Book Linkers, 1976.
5. Translation of the Surya Siddhanta by Bapu Deva Sastri (1861) ISBN 3-7648-1334-2, ISBN 978-3-7648-1334-5.
6. Surya-Siddhanta: A Text Book of Hindu Astronomy by Ebenezer Burgess, ed. Phanindralal Gangooly (1989/1997) with a 45-page commentary by P. C. Sengupta (1935).
7. Translation of the Sûrya-Siddhânta: A text-book of Hindu astronomy, with notes and an appendix by Ebenezer Burgess Originally published: Journal of the American Oriental Society, 1860.
8. The Bṛhatsaṃhitā, Varāhamihira, Avadh Vihārī Tripathi, Sampūrṇanand-Saṃskṛta-Viśvavidyālayāh, Varanasi,1968.
9. A History of Civilization in Ancient India, Based on Sanskrit Literature, Romesh Chunder Dutt, Vol. 3, ISBN 0-543-92939-6.
10. The Arctic Home in the Vedas, Lokamanya Bal Gangadhar Tilak, Tilak Bros, Gaikwar Wada, Poona City,1903.
11. Orion or the Antiquity of the Vedas, by Bal Gangadhar Tilak, Mrs. Radhabai Atmaram Sagoon, Bombay, 1893.
12. The Taittirīya-Brāhmaṇa, Text with commentary of Sāyaṇāchārya, Ganesh Umakant Thite, New Bharatiya Book Corporation, Delhi-7, 2012, ISBN 8183151817.
13. वेदाङ्गज्योतिषम्, लगधमुनिप्रणीतम्, शिवराजः आचार्यः कौण्डिन्यायनः, विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला-158, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2005, रु.350.
14. अष्टाङ्गहृदयम् : श्रीमद्वाग्भटविरचितम् ; श्रीमदरुणदत्तविरचितया सर्वाङ्गसुन्दराख्यया व्याख्यया हेमाद्रिप्रणीतया आयुर्वेदरसायनाह्वया टीकया च समुल्लसितम्, प्रतिसंस्कर्त्तारौ, अण्णा मोरेश्वर कुण्टे तथा कृष्णशास्त्रीनवरे; परिष्कर्त्ता हरि सदाशिव शास्त्री पराडकरः, काशी संस्कृत ग्रन्थमाला, 315, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2009, पुनर्मुद्रण।

वरीयान् सहायकाचार्यः ,

रा.सं.सं. क.जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई।

 ISSN – 2349-3100

वास्तुशास्त्रे दिक्साधनम्

✍डॉ.अशोकथपलियालः

वास्तुशब्दस्य तात्पर्यं निवासस्थानादस्ति। अस्य शब्दस्योत्पत्तिः ‘वस्’धातोः यत्तु निवासार्थे प्रयुक्तो भवति। अनेन प्रकारेण वास्तोः तात्पर्यं भवननिर्माणयोग्यभूखण्डेनास्ति। भूखण्डस्य शुभाशुभपरीक्षणं भवननिर्माणविधेश्च ज्ञानं येन शास्त्रेण भवति तदेव वास्तुशास्त्रम्। प्राकृतिकतत्त्वानां पंचमहाभूतानां च सामंजस्येन उत्तमभवनस्य निर्माणयोजना अतिप्राचीनकालादेव वास्तुशास्त्रस्य उद्देश्यम् अस्ति। वास्तुशास्त्रं पंचमहाभूतैः निर्मिते प्राणिजीवने एतेषां महाभूतैः निर्मितवातावरणेन साकं तस्य सामंजस्यं स्थापयति। एतेषां महाभूतानां संतुलेनैव प्राणी क्रियाशीलः स्वस्थं च भवति। परन्त्वेतेषाम् असंतुलेनैव सः निष्क्रियः अस्वस्थं च भवितुं शक्यते। अतः मनुष्यस्य शारीरिक-मानसिकक्षमतासु अभिवृद्धिं कृत्वा तं स्वस्थं गतिशीलं च कर्तुं वास्तुशास्त्रस्य आचार्याः मानकनियमानां सिद्धान्तानां च प्रतिपादनं कृतवन्तः। वास्तुशास्त्रनाम्ना प्रसिद्धेयं भवननिर्माणकला तावत्येव प्राचीना यावत्येव मानवसभ्यता वर्तते। वास्तुशास्त्रमिदं प्राचीनवैदिककाले अथर्ववेदस्योपवेदरूपे स्थापत्यवेदनाम्ना प्रसिद्धम् आसीत्। अस्य वास्तुशास्त्रस्य गृह-ग्राम-पुर-देववास्तु-जलाशय- शिल्प-आलेखादयः नैके भेदोपभेदाः दृश्यन्ते। वास्तुशास्त्रस्य परिणाहे भवन-प्रासाद-नगर-दुर्ग-प्रतिमा-आलेखन- शयनासनादयः सन्ति।

वास्तुशास्त्रे दिक्साधनस्य महत्वं वर्तते। वास्तुक्षेत्रे कस्यां दिशि पूजागृहम्, कोषागारः, स्नानगृहम्, भोजनगृहादिकं वा स्यात् ? यथा गृहयोजनान्तर्गतं गृहकक्षनिर्माणाय दिक्परत्वेन गृहकक्षविन्यासः-

पूर्वस्यां श्रीगृहं प्रोक्तमाग्नेयां स्यान्महानसम्।।
शयनं दक्षिणस्यां च नैर्ऋत्यामायुधाश्रयम् ।
भोजनं पश्चिमायां च वायव्यां धनसंचयम्।।
उत्तरे द्रव्यसंस्थानमैशान्यां देवतागृहम् ।
इन्द्राग्नयोर्मथनं मध्ये यमाग्नयोर्घृतमन्दिरम् ।।
यमराक्षसयोर्मध्ये पुरीषत्यागमन्दिरम् ।
राक्षसजलयोर्मध्ये विद्याभ्यासस्य मन्दिरम् ।।
तोयेशानिलयोर्मध्ये रोदनस्य च मन्दिरम्।
कामोपभोगशयनं वायव्योत्तरयोर्गृहम् ।।
कौबेरेशानयोर्मध्ये चिकित्सामन्दिरं सदा ।
पुरन्दरेशयोर्मध्ये सर्ववस्तुषु संग्रहम् ।।
सदनं कारयेदेवं क्रमादुक्तानि षोडश।
नैर्ऋत्यां सूतिकागेहं नृपाणां भूतिमिच्छता ।। [1]

इत्यादिविषये दिक्साधनमभीष्टमस्ति। एवमेव पूर्वादिदिक्षु -

स्यादुन्नतिः पूर्वनते नराणां वास्तौ धनं दक्षिणभागतुंगे।
क्षयो धनानां विनते प्रतीच्यामुच्चैर्विनाशो ध्रुवमुत्तरे तु।। [2]

इति गृहोच्चनीचत्वफलज्ञानाय अपि दिक्साधनमभीष्टम्। एवमेव दिक्साधनस्य आवश्यकता वास्तुशास्त्रे भवत्येव।

तत्र दिक्साधनं स्थूलसूक्ष्मभेदाद्विविधम्। **यत्रोदितोऽर्कः किल तत्र पूर्वा तत्रापरा यत्र गतः प्रतिष्ठाम्**[3] इति भास्करवचनानुसारेण सूर्यस्योदयास्तबिन्दू स्थूलपूर्वपश्चिमौ भवतः। सूर्यक्रान्तेः वैलक्षण्यात् प्रतिदिनं सूर्यस्योदयास्तबिन्दूनां भिन्नत्वाच्च सौकर्याय स्थूलदिग्ज्ञानं यात्रादिषु स्वीक्रियते, परन्तु श्रौतस्मार्तकर्मसम्पादने यज्ञमण्डपगृहादीनां निर्माणे वेधकर्मणि च सूक्ष्मदिक्साधनस्य आवश्यकता भवत्येव यतः –

प्रासादे सदनेऽलिन्दे द्वारे कुण्डे विशेषतः।
दिङ्मूढे कुलनाशः स्यात्तस्मात् संसाधयेद्दिशः।

प्रथमं सुसमे क्षेत्रे प्राचीं संसाधयेत्स्फुटाम्।
सिद्धान्तोक्तप्रकारेण ततो निष्पादयेद्गृहम्।। [4]

ततः दिक्साधनस्य पूर्वं किं करणीयम्? इति जिज्ञासायां तत्र भणितमस्ति यत् –

ज्ञात्वा पूर्वं धरित्रीं दहनखननसम्प्लावनैः संविशोध्य
पश्चात्कृत्वा समानां मुकुरजठरवद्वचयित्वा द्विजेन्द्रैः।
पुण्याहं कूर्मशेषौ क्षितिमपि कुसुमाद्यैः समाराध्य शुद्धे,
वारे तिथ्यां च कुर्यात् सुरपतिककुभः साधनं मण्डपार्थम्।।[5]

गृहनिर्माणयोग्यं भूमिं विज्ञाय सर्वप्रथमं, कण्टकतुषतृणघासादीन् अग्निना भस्मीकृत्य, उन्नतभागान् खनित्वा समतलीकृत्य, सम्यग्रूपेण नतीकृत्य च भूमिं सम्यक् संशोध्य, दर्पणोदरवत् भूमिं समतलीकृत्य, पश्चात् ब्राह्मणैः पुण्याहं वाचयित्वा विष्णुस्वरूपकच्छपं अनन्तशेषनागं भूमिं च कुसुमाद्यैः समाराध्य शुभतिथिवारादिषु यज्ञमण्डपरचनार्थमपि च गृहादिनिर्माणार्थं पूर्वादिदिशां निर्धारणं करणीयमिति। प्रसंगेSस्मिन् सूर्यसिद्धान्तः-

शिलातलेSम्बुसंशुद्धे वज्रलेपेSपि वा समे।
तत्र शङ्क्वंगुलैरिष्टैः समं मण्डलमालिखेत्।।[6]

अर्थात् जलेन सम्यक्प्रकारेण शोधिते सर्वतः जलवत् समीकृते पाषाणपृष्ठेSपि वा वज्रवत् काठिन्यकर्तृकमृच्चूर्णविमिश्रधातोः लेपादिभिः आदर्शोदरादिवत् समीकृते भूतले मध्याह्नकालिकच्छायातोSधिकैः यैरंगुलैश्शंकोरंकनं कृतं तैरंगुलैरर्थात् शंकुद्वादशसमैरंगुलैः नतोन्नतादिरहितं समं वृत्तमेकं समन्ततः रचयेत्। यदि मध्याह्नकालिकछायातः न्यूनैः शंक्वगुलैः वृत्तं क्रियते तदा छायाग्रं तद्वृत्ताद्बहिः स्यात्। तदानीं छायाग्रसूत्रस्य वृत्तबहिर्गतत्वाद् दिग्ज्ञाने वैषम्यं भविष्यति अतः मध्याह्नात्पूर्वं पश्चाच्च छायाप्रवेशसम्भवात् मध्याह्नकालिकछायातः अधिकं व्यासार्धमानं करणीयम्।

तत्र सूर्यसिद्धान्तानुसारेण[7] पूर्वोक्तवृत्तस्य केन्द्रे शंकोः स्थापना कार्या। तस्य शंकोः छायाग्रं वृत्ते पूर्वार्धे अपरार्धे च यत्र बिन्दुद्वये स्पृशेत् तत्र बिन्दुद्वये अपि पूर्वापरसंज्ञके चिह्नं विधाय तन्मध्ये मत्स्योत्पादनेन दक्षिणोत्तरा रेखा कार्या। एवं पूर्वादिदिशाज्ञाने सति पूर्वोत्तरबिन्दुभ्यां मत्स्योत्पादनेन नैर्ऋत्यैशानविदिशौ तथा च पूर्वदक्षिणबिन्दुभ्यां मत्स्योत्पादनेन वायव्याग्नेयविदिशौ सिध्यतः। परन्तु दिग्ज्ञानमिदं सर्वदैव न समीचीनं यतः प्रवेशनिर्गमकालिकच्छायाग्रीभुजौ सर्वदा न तुल्यौ। उपर्युक्तदिग्ज्ञानं केवलं सायनकर्कारम्भदिवसे सायनमकरारम्भदिवसे वा एव समीचीनं भवति तद्दिने क्रान्तिगतेः शून्यसमत्वात्। अन्यदिने तु क्रान्तेः वैलक्षण्यात् छायाग्रप्रवेशनिर्गमकालिकनतांशयोः साम्ये अपि सूर्यस्य क्रान्त्योरग्रयोश्च न्यूनाधिकत्वात् तदुत्पन्नौ प्रवेशनिर्गमकालिकौ छायाग्रपूर्वापरसूत्रान्तररूपौ भुजौ न्यूनाधिकौ भविष्यतः। तेन भुजाग्रद्वयगता रेखा वास्तवपूर्वापररेखा समानान्तरा न भवति। अतः भास्करेण चालनदानपूर्वकं सूक्ष्मदिक्साधनस्य प्रयासः कृतः। तद्यथा[8] -

वृत्तेऽम्भः सुसमीकृतक्षितिगते केन्द्रस्थशंकोः क्रमात्
भाग्रं यत्र विशत्यपैति च यतस्तत्रापरेन्द्र्यो दिशौ।
तत्कालपमजीवयोस्तु विवराद्भाकर्णमित्याहता-
ल्लम्बज्याप्तमितांगुलैरयनदिश्यैन्द्री स्फुटा चालिता।।
तन्मत्स्यादथ याम्यसौम्यककुभौ सौम्यध्रुवे वा भवे-
देकस्मादपि भाग्रतो भुजमितां कोटिमितां शंकुतः।
न्यस्येद्यष्टिमृजुं तथा भुवि यथा यष्ट्याग्रयोः संयुतिः
कोटिः प्राच्यपरा भवेदिति कृते बाहुश्च याम्योत्तरा।।

अर्थात् जलेन सम्यक् प्रकारेण समतलीकृतभूमौ इष्टप्रमाणं वृत्तं विलिख्य तस्य वृत्तस्य केन्द्रे द्वादशांगुलशंकुं निवेश्य तस्य छायायाः अग्रभागं क्रमशः तस्मिन् वृत्ते यत्र पूर्वाह्ने छाया प्रविशति तत्र पश्चिमदिक्, अपराह्ने च यत्र छाया निर्गच्छति तत्र पूर्वदिक् भवति।वृत्ते छायाप्रवेशनिर्गमकालयोः प्रसाधितयोः क्रान्तिज्ययोः अन्तरात् तस्याः छायाकर्णेन गुणितात् लम्बज्यया भक्तात्

यल्लब्धमंगुलादिकं फलं, तेन पूर्वदिक् अयनदिशि चालिता अर्थात् यदि उत्तरायणे रविः वर्तते तदा उत्तरतः यदि च सूर्यः दक्षिणायने तदा दक्षिणतः चालिते सति स्पष्टा पूर्वदिक् भवति। स्पष्टपूर्वदिशः कर्कटेन मत्स्यनिर्माणात् दक्षिणोत्तरदिशौ स्पष्टे भवतः। अथवा ध्रुवमवलम्बसूत्रेण विद्ध्वा ध्रुवाभिमुखकीलकः सौम्या दिक्, स्वस्थानकीलको याम्या दिक्, तन्मत्स्यात्पूर्वापरे दिशौ ज्ञेयौ। परन्त्वत्र भुजान्तरं आचार्येण वृत्तपरिधौ दत्तम्। परन्तु चापात्मकपरिधौ चालनदानं न समीचीनं, चापान्तरात् ज्यान्तरस्य न्यूनत्वाद्विजातीयत्वाच्च। वस्तुतः उपर्युक्तभुजान्तरं प्रसाध्य तत् प्रवेशनिर्गमबिन्द्वन्तरव्यासवृत्ते बृहच्छायाग्रीयभुजाग्रबिन्दोः पूर्णज्यारूपं दद्यात्। तदग्रात् लघुच्छायाग्रीयभुजाग्रबिन्दुगता रेखा भुजान्तररेखोपरि लम्बो भवेत्। सा रेखा विलोमदिशि वर्धिता छायाकर्णवृत्तपरिधिं गच्छति। तदा सा पूर्वापरा रेखा छायाकर्णवृत्तकेन्द्रे गता वास्तवपूर्वापररेखायाः समानान्तरा भविष्यति। तदा पूर्वापररेखा-छायाकर्णवृत्तयोः योगबिन्दू वास्तवपूर्वापरदिशौ भवतः। तदा मत्स्यात्पादनेन याम्योत्तरा रेखा प्रसाध्या।

उपर्युक्तदिग्ज्ञानं तु प्रवेशनिर्गमकालिकयोः छायाद्वयाग्रदर्शनेनास्ति परन्तु एकस्मात् छायाग्रदर्शनेनापि दिग्ज्ञानं भवितुं शक्यते। छायायाः भुजं कोटिं चानीय भुजकोटिमिते सरले शलाके गृहीत्वा, शंकुमूलात् यथा दिग्गतां कोटिशलाकां छायाग्रात् व्यस्तदिग्गतां भुजशलाकां च भूमौ अनेन प्रकारेण स्थापयेत्। अनेन प्रकारेण शलाकाग्रयोः संयोगः स्यात्। एवं कृते सति कोटिः पूर्वापरा दिग्भवति भुजश्च दक्षिणोत्तरा दिग्भवतीति। एवमेव ग्रहलाघवे स्थूलप्रकारः -

वृत्ते समभूगते तु केन्द्रस्थितशंकोः क्रमशो विशत्यपैति।
छायाग्रमिहापरा च पूर्वा ताभ्यां सिद्धतिमेरुदक् च याम्या।।[9]

एवमेव मध्याह्नकाले सप्तांगुलप्रमाणस्य शंकोः छायाग्रात् शंकुमूलपर्यन्तगामिनी या रेखा, तया याम्योत्तरा रेखा सिध्यति यया उत्तरदिग्ज्ञानं भवति। रात्रौ दिग्ज्ञानस्योपायार्थं तु बृहत्सप्तर्षिमण्डलस्य तारासु अग्रिमे द्वे तारे मार्कटिके, येऽकाशे ध्रुवतारातः प्रायः एकस्यां सरलरेखायां दृश्येते, ते तारे ध्रुवतारकायाः समतां नीते अवलम्बे (शंकौ) भूमौ स्थितस्य दीपशिखापर्यन्तं सूत्रं नीयमाने मार्कटिकध्रुवशंकुदीपशिखानाम् एकस्यां सरलरेखायां सति तेषामैक्यता भवेत्, तदा शंकुमूलतः दीपपर्यन्तं या सरला रेखा सा याम्योत्तरा भविष्यति। तया याम्योत्तरारेखया उत्तरा दिक् ज्ञेया ।[10]

अनेन प्रकारेण दिक्साधनस्य नैके विधयः प्राचीनग्रन्थेषु वर्णिताः सन्ति। आधुनिककाले प्रायः जनाः दिङ्निर्णयार्थं कम्पासयन्त्रस्य प्रयोगं कुर्वन्ति। अस्मिन् विषये कमलाकरः कथितवान् -

सचुम्बकादेव सुशिल्पविज्ञाः कुर्वन्ति दिग्ज्ञानमिहान्यथैव।
पूर्वापरा याऽत्र कृता प्रकारैर्ज्ञेया बुधैः सा सममण्डलीया।।[11]

पाद टिप्पणी

1.वास्तुकल्पलता 1/148-153
2. तत्रैव
3.सि.शि.गोला. भुवनकोश 45
4.उद्धृतं वृ.वा.मा. दिक्साधन 2
5. बृ.वा.मा. दिक्साधन 3
6. सूर्यसिद्धान्त त्रिप्रश्न 1
7. तत्रैव 2-4
8. सि.शि.त्रिप्रश्न 8-9
9.ग्रहलाघव त्रिप्र. उद्धृत वास्तुकल्पलता 2/6
10.वास्तुकल्पलता 2/7
11सि.त.वि. त्रिप्रश्न 378

असि.प्रो.(ज्योतिषम्)आचार्यः, ज्योतिषविभागः राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, भोपालपरिसरः

पञ्चाङ्ग-साधनम्

✍ अनिरुद्धनारायणशुक्लः

" वारं तिथिश्च नक्षत्रं योगं करणमेव च"।इति वचनात् पञ्चाङ्गेषु तिथि - वार - नक्षत्रं - योग - करणानि, इति पञ्चाङ्गं भवति । तत्र च तावत् अभिष्टदिने सूर्योदयकलिकौ रविचन्द्रौ प्रसाध्य तिथि- वार- नक्षत्रं- योग- करणानां साधनं करणीयम्।

वार:- सर्वत्ररव्यादित: शन्यन्तं(रवि:,चन्द्र:,भौम:,बुध:,वृहस्पति:,शुक्र:,शनि:) सप्तवारा: भवन्ति: । ते च वारा: आकासस्थसप्तज्योतिषपिण्डानां कक्षाक्रमेण होराभ्रमणवशाच्चभवन्ति। यथोक्तम्- **"मन्दमरेज्यभूपुत्रसूर्यशुक्रेन्दुजेन्दव:"**[1] कक्षाक्रमेण **"मन्दादध: क्रमेणस्युस्चतुर्थादिवसाधिपा:"**[2] अनया रीत्या चतुर्थश्चतुर्थोग्रहो वासरेश्वरो भवति। तत्र तु होरा "सार्धद्विघटिका होरा" भवति, अहोरात्रैकस्मिन् षष्ठिघटिका: भवन्ति, अतएव अहोरात्रैकस्मिन् चतुर्विन्शतिहोरा भवन्ति, अत: शन्यादिकक्षाक्रमगता ग्रहा अधोध: क्रमेण होरेशा: भवन्ति, अत्र सप्तग्रहा:, होराश्च चतुर्विन्शति: अतो चतुर्विन्शतिहोरा: सप्तभिर्भाजितस्तदा शेषं त्रयमवशिष्यते तेन प्रतिदिनं त्रयो (शन्यादिकक्षागतत्रयग्रहा:) होरेशा गता: भवन्ति। तदग्रिमदिने चतुर्थो ग्रहो(रविग्रह:) हि प्रथमहोरेश: भवति। अनेन प्रकारेण प्रतिदिनं चतुर्थो ग्रहो अर्थात् रवित: चतुर्थकक्षाभूतग्रह: प्रथमाधिकारवशात् दिनपति: भवति। अपि च **"लङ्कानगर्यामुदयाच्चभानोस्तस्यैववारे प्रथमं बभूव"**[3] इति सिद्धन्तेन् रविवारात् वाराणां प्रवृत्तिर्भवति।

तिथि:-

प्रतिपद-द्वितीया-तृतीया-चतुर्थी-पन्चमी-षष्ठी-सप्तमी-अष्टमी- नवमी-दशमी-एकादशी-द्वादशी-त्रयोदशी-चतुर्दशी-पूर्णीमा:(कृष्णपक्षे अमावास्या) इतेकस्मिन् चान्द्रमासे त्रिन्शत् तिथय: शुक्ल-कृष्णपक्षभेदात् भवन्ति। तत्र तिथिसाधनय सूर्योदयकलिकौ राश्यादिस्पष्टचन्द्रेण स्फुटसूर्य: ऊनीकृत्य यच्छेशं तदन्शादिमाने द्वादशभक्ते सति यल्लब्धं तद्गततिथि: भवति, तथा यच्छेशं तद् वर्तमानतिथे: भुक्तांशा: भवन्ति, तद् भुक्तांशा: द्वादशसंख्यया रहिते भोग्यांशा: भवन्ति, घटिकाग्यानार्थमनुपात:। यदि गत्यन्तरविकलाभि: षष्ठिघटी लभ्यते तदा आगतभुक्तांशभोग्यांशयो: विकलामाने किमितित्रैरशिकेन वर्तमानतिथे: गतगम्यघटीमानं भवति। गत-गम्यघटी-योगेसति वर्तमानतिथे: सम्पूर्णमानं भवति।[4] इति

नक्षत्रम्-

तदानयनाय राश्यादिस्पष्टचन्द्रस्य विकला प्रसाध्य अष्टशतेन(८००) भक्ते सति यल्लब्धं तद्गतनक्षत्रस्य सन्ख्या भवति, यच्छेशं वर्तमाननक्षत्रस्य गतकला भवति। गतकलोनष्टशतकला भोग्यकला भवति। गतकला षष्टिगुणिते स्फुटचन्द्रगत्या भाजिते सन् वर्तमाननक्षत्रस्य गतघटी भवति, तथा भोग्यकलां षष्टिगुणिते स्फुट्चन्द्रगतिकलया भाजिते भोग्यघटी भवति।गतभोग्यघट्योर्योगे सति वर्तमाननक्षत्रस्य पूर्णघटी भवति। उक्तश्च – **भभोगोऽष्टशतीलिप्ता: खाश्विशैलास्तथा तिथे:। ग्रहलिप्ता भभोगाप्ता भानि भुक्त्या दिनादिकम्॥[5] इति**

योगसाधनम्- युतिरेव योग:। स्पष्टरविचन्द्रयो:योगकलां अष्टशतेनभाजिते यल्लब्धं तद् गतयोगसन्ख्या भवति। यच्छेशं तद् वर्तमानयोगस्य भुक्तकला भवति,पुन: अष्टशतोनितगतकला वर्तमानयोगस्य भोग्यकला भवति। भुक्तभोग्यकलाया: घटीकरणार्थम् अनुपात:। रविचन्द्रगतियोगविकलया षष्ठि घटी लभ्यते तदा भुक्तभोग्य विकलया किमित्यनुपातेन वर्तमानयोगस्य भुक्तभोग्यघटी भवति, तद्भुक्तभोग्यघटी योजनेन योगस्य सम्पूर्ण मानं भवति। उक्तश्च-[6]

करणसाधनम्- तिथ्यर्धं करणम्। द्विगुणितगततिथिसंख्यां सप्तभक्ते सति यच्छेशं तद्वर्तमानतिथे:पूर्वार्धे बवादि करणं भवति। तद्बवादिकरणे एकयुक्ते सति वर्तमानतिथे: उत्तरार्धे अग्रिमं करणं भवति। सूर्योदयानन्तरं

तिथ्यर्धोनितभुक्ततिथिकाल: करणस्य घट्यादिमानं भवति। यदि भुक्ततिथिमानं तिथ्यर्धाधिकस्यात्तदा अग्रीमकरणस्य सूर्योदयानन्तरं घट्यादिमानं भवति। कृष्णपक्षस्य चतुर्दशीतिथे: उत्तरार्धत: क्रमश: शकुनि-चतुष्पद-नाग-किंस्तुघना: चत्वार: करणानि भवन्ति । यथोक्तम्-

भक्ता व्यर्कविधिर्लवा यमकुभिर्याता तिथि: स्यात् फलं शेषं यातमिदंहरात् प्रपतितं भोग्यं विलिप्तास्तयो:।
भुक्त्योरन्तरभाजिताश्चघटिकायातैष्यका: स्यु:क्रमात् पूर्वार्धे करणं बवादगततिथि:द्विघ्न्यद्रितष्ता भवेत्।
तत् सैकं त्वपरे दलेथ शकुने: स्यु: कृष्णभूतोत्तरादर्धाच्चाथ विधोश्च सार्कसितगोर्लिप्ता:खखाष्टोद्धृता:
याते स्तो भयुती क्रमाद्गगनषण्णिघ्ने गतष्ये तयोरिन्दोर्भुक्तिहृते जवैक्यविहृते यातैष्यनाड्य: क्रमात्। इति,[7]

उदाहरणम्- श्रीशुभसंवत् २०७३ शके १९३८ माघकृष्णपक्ष: प्रतिपदातिथि: शुक्रवासर: तदनुसारं दिनाङ्क: १३ जनवरी २०१७ तम: वर्ष: ।

तिथिसाधनम् –

राश्यादि:स्पष्टचन्द्र:- ०३।०६।३५।५४,
राश्यादि:स्पष्टसूर्य:- ०८।२८।५७।१६,
राश्यादि:अन्तरम्- ०६।०७।३८।३८,
अंशादि: १८७।३८।३८, अस्मिनंशादिमाने द्वादशभक्ते सति लब्धी पञ्चदश गततिथि: भवति।
शेषम्- ०७।३८।३८, वर्तमानतिथे: भुक्तफलम् अस्य विकला=२७५१८
१२।००।०० - ०७।३८।३८ = ०४।२१।२२, वर्तमानतिथे: भोग्यफलम् अस्य विकला=१५६८२,
सूर्यगति:- ६१।०८, चन्द्रगति:-८४७।४७, सूर्यचन्द्रगत्यन्तरविकला=७८६।३९=४७१९९,
भुक्तविकलया(२७५१८)अनुपात:२७५१८* ६०/४७१९९=३४।५९ घट्यादिभुक्ततिथि:,
पुन:भोग्यविकलया(१५६८२)अनुपत:१५६८२*६०/४७१९९=१९।५६ घट्यादिभोग्यतिथि:,
भुक्तभोग्ययो:घट्यो: योगे सति तिथिमानं भवति।

नक्षत्रसाधनम्-

स्पष्टचन्द्र:= ०३।०६।३५।३४,
चन्द्रगतिकलादि: ८४७।४७,
अंशात्मकचन्द्र: = ९६।३५।३४, कलात्मकम् = ५७९५।३४/८००= लब्धी:७=पुनर्वसु -गतनक्षत्रम्,
शेषम् = १९५।३४ पुष्य- इति वर्तमाननक्षत्रस्य भुक्तमानम्, विकलादि:= ५०८६७,
एकस्मिन् नक्षत्रे अष्टशत(८००) कला भवति, ८००।०० - १९५।३४ = ६०४।२६ पुष्य नक्षत्रस्य भोग्यकलादिमानम्, भोग्यविकलादि: = ६०४*६०+२६=३६२६६,
भुक्तविकलादि:=१९५*६०+३४=११७३४,
भुक्तविकलयानुपात:=११७३४*६०/५०८६७=१३।५०भुक्तघट्यादि:,
पुन:भोग्यविकलयानुपात:=३६२६६*६०/५०८६७= ४२।४७ भोग्यघट्यादि:,
आगतभुक्तभोग्ययोर्योगे १३।५०+४२।४७=५६।३७ पुष्यनक्षत्रस्य सम्पूर्णमानं भवति

योगसाधनम्-

स्पष्टसूर्य:- ०८।२८।५७।१५, सूर्यगति: ६१।०७,
स्प्ष्टचन्द्र:-०३।०६।३५।३४,चन्द्रगति: ८४७।४७,

स्पष्टसूर्य:-०८।२८।५७।१५+ स्प्ष्टचन्द्र:-०३।०६।३५।३४=००।०५।३२।४९,कलादि:=३३२।४९,
३३२।४९/८००=लब्धि:०,शेषम् ३३२।४९ भुक्तकलादि:, १९९६९=भुक्तविकला,
८००।००-३३२।४९=४६७।११ भोग्यकलादि:, २८६८०=भोगविकला,
अनुपात:- १९९६९*६०/५४५३३=२१।२८ भुक्तघटी,
पुन: अनुपात:-२८६८०*६०+५४५३३=३०।५० भोग्यघटी,
भुक्तभोग्यघट्योर्योगे २१।२८+३०।५०=५२।४८ वर्तमानयोग: भवति।

करणसाधनम्-

गततिथिसन्ख्या=१५*२=३०, ३०/७=लब्धी:४, शेषम् २, गतकरणम्(बालव)।
गतकरणसन्ख्या २+१=३ वर्तमानतिथिपरार्धे कौलव करणं भवति, "तिथ्यर्धं करणमित्युक्त्या" पूर्वानीततिथिमानस्यार्धेसति ५४।५५/२= २७।३३ भवति।अत: पूर्वार्धे २७।३३ घट्यादिपर्यन्तम् कौलवकरणं जातम्।
तिथ्यर्धे=२७।३३, भुक्ततिथि:=३४।५९,
३४।५९-२७३३=०७।२६ सूर्योदयानन्तरम् अग्रीमकरणस्य मानं भवति।

पाद टिप्पणी

1.सूर्यसिद्धन्त: भूगोलाध्याये -३१।
2.सूर्यसिद्धन्त: भूगोलाध्याये -७८।
3'सिद्धान्त शिरोमणि: कालमानाध्याय: १५ ।
सूर्य सिद्धन्त: स्पष्टाधिकार: ६६
4सूर्य सिद्धन्त: स्पष्टाधिकार: ६६
5.सूर्य सिद्धन्त: स्पष्टाधिकार: ६४ ।
6.-सूर्य सिद्धन्त: स्पष्टाधिकार: ६५ ।
7ग्रहलाघव: रविचन्द्रस्पष्टादिकार: पञ्चाङ्गसाधनम्।
8.तिथ्यर्धोनितभुक्ततिथिकाल: करणस्य घट्यादिमानं भवति। यदि भुक्ततिथिमानं तिथ्यर्धाधिकस्यात्तदा अग्रीमकरणस्य सूर्योदयानन्तरं घट्यादिमानं भवति

प्राध्यापकः ,ज्योतिषविभागः राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, सोमैया परिसरः, मुम्बई

 ISSN – 2349-3100

शिशुपालवधमहाकाव्ये ज्योतिषशास्त्रम्

✍ डॉ. जयप्रकाश नारायण

महाकविमाघप्रणीतं शिशुपालवधमहाकाव्यं संस्कृतवाङ्मयस्यामूल्यो निधिः वर्तते। महाकाव्यस्यास्य गणना बृहत्त्रय्यां विधीयते। महाकविर्माघः परमविद्वान्ननेकशास्त्राणां वेत्ता पण्डितश्चासीत्। अतः शिशुपालवधरचना समये यथावसरं कथानके सुरूचिसन्निवेशार्थ बहुविधशास्त्रज्ञानानां योगस्तेन सहजतया विहितः। माघः स्वमहाकाव्ये स्वपूर्ववर्तिनां सर्वेषां कवीनामुत्कृष्टगुणानां समन्वयमकरोत्। सः कालिदासात् काव्यसौन्दर्य भारवेरर्थगौरवम् भट्टेः च व्याकरणपाटवं संकलितम्। इदं महाकाव्यं संस्कृतवाङ्मये सर्वेभ्यः परवर्तिभ्यः कवेभ्यः सर्वथा अनुकरणीयं विद्यते। ''माघे सन्ति त्रयो गुणाः'' इत्यालोचनात्मकसूक्तौ उपमार्थगौरवं पदलालित्यम् इति त्रयो गुणाः संकेतिताः परमत्र त्रिसंख्या प्रतीकत्वेनैव गृहीता प्रतीयते। वस्तुतः माघोऽसीमगुणसम्पन्नः, बहुश्रुतः बहुपठितः, बहुज्ञ, सर्वतोन्मुखीप्रतिभासम्पन्नः कविचूडामणिरिति। नायं काव्यमर्मज्ञः, अपितु वेदे, पुराणेतिहासे, धर्मे, दर्शने, व्याकरणे, काव्यशास्त्रे नाट्यशास्त्रे नीतौ, राजनीतौ आयुर्वेदे, ज्योतिषशास्त्रे कामशास्त्रे संगीतशास्त्रे, पशुविज्ञानादिके च परमां नैपुणीमावहति।

प्रस्तुतशोध पत्रे शिशुपालवधमहाकाव्ये प्रयुक्तानां ज्योतिषतत्त्वानां विवेचनं क्रियते।

किं नाम ज्योतिषशास्त्रम्? ज्योतिषशास्त्रं खलु भगवतो वेदस्य नेत्रस्थानापन्नं[1] समाजस्य दर्शकम्, येन विना सर्वोऽपि कर्मकलापः कुसमये समारभ्यमाणो निष्फलायेत, अन्धस्य गमनकर्मवत्। आकाशीय ग्रह नक्षत्रादीनां संयोगवियोगेन शुभाशुभकालस्य जीवाजीवेषु जायमानत्रैकालिकानुकूलप्रतिकूलप्रभावस्य चैतनित्यपूर्वदर्शनम्। तदुक्तम्–

यदुपचितामन्यजन्मनि शुभाशुभां कर्मणः पङ्क्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव।[2]

शुभाशुभस्य नित्यव्यञ्जकमेतदितिभावः। अथ च प्रत्यक्षं ज्योतिषशास्त्रं चन्द्राकौ यत्र साक्षिणौ इत्यादिनां खगोलज्योतिः पुञ्जस्य प्रभावः सर्वत्र सिद्धः। तत्र प्रभावोऽयं नहि सर्वदा वाधाच्च। तस्मात् सिद्धः आश्रयभेदेन कालभेदेन च प्रभावभेदः। ज्योतिषशास्त्रे ये देशकालादीनां प्राणिनाञ्च साधारण शभाशुभफलं बोधयन्ति ते हि संहिता ग्रन्थाः। ये च व्यक्तिविशेषस्य जन्मकालानुसारेण जीवनफलं व्यञ्जयन्ति ते खलु जातकग्रन्थाः होराशास्त्रमिति वा । तथा च ये ग्रन्थाः ग्रहनक्षत्रादीनां गतिजन्यं संयोगवियोगं निरूपयन्ति ते वै सिद्धान्तगणितान्यतरपदेन व्यपदिश्यन्ते। एवञ्च ज्योतिष कल्पद्रुमस्य गणितफलितसंहितारूपं स्कन्धत्रयं विराजते।

भारतीयं ज्योतिषशास्त्रं हि अनन्त कोटि तारागणेषु नवग्रहान् सप्तविंशति नक्षत्राणि द्वादशराशीश्च स्वरूपादिना वर्णयतीति। तत्र नवग्रहेषु सूर्यः सर्वश्रेष्ठः आत्मस्थानीयो ग्रहराजः। तदुक्तम्– सूर्य आत्मा जगतस्थुषश्च[3] इति।

अथ च – स्वीत्मना च दिवानाथः[4] इति। पृथ्वी–भौम–बुध–गुरु–शुक्र–शनिग्रहाश्च सूर्य परिभ्रमन्ति चन्द्रश्च पृथ्वीं परिभ्राम्यतीति विशेषः। तत्र चन्द्रमार्गः पृथ्वीमार्गश्च यत्र केन्द्रे मिथो मिलतः तत् केन्द्रस्थलमेव राहुः केतुश्चेति कथ्यते। यत्र केन्द्रम समुत्तीर्य चन्द्रः उतराशा व्रजति स राहुः, यच्च केन्द्रं समुतीर्य स दक्षिणाशां याति स केतुरिति। एतौ छायाग्रहोपग्रहेत्यादि शब्दैरपि व्यपदिश्येते। नक्षत्राणि राशयश्चागतिमन्ति। तद् यथा–

आकाशे यानि[5] दृश्यन्ते ज्योतिर्बिम्बान्यनेकशः।
तेषु नक्षत्रसंज्ञानि ग्रहसंज्ञानि कानिचित्।
तानि नक्षत्र नामानि स्थिरस्थानानि यानि वै[6]।।

शिशुपानवधमहाकाव्ये प्रायः सर्वेषु सर्गेषु ज्योतिशास्त्रस्य विवेचनं प्राप्यते। कृष्णनारदसम्भाषणनामके प्रथमे सर्गे यत्र शुभ वर्णो मुनिसलभशीतलतामापादाय शरच्चद्रमरीचिरोच्चिषम्।[7] इत्युक्तम्। तत्रैव तस्य तपः प्राप्तुं तेज आरव्यातुम् पतत्पतङप्रतिमः[8] इति विशेषणं सर्वथा मनो हरति। देवर्षो सूर्याचन्द्रमसोः धर्मयोः सहैव प्रतिपादायिषया एकस्मिन्नेव पद्ये विशेषण इयं काव्यशोभामाधत्ते– ''स तप्तकार्तस्वर भास्वराम्बरः कठोराताराधिपलाञ्छनच्छवि'' इति। पुनश्च ''तुषारमूर्तेरिव नक्तमंशवः'' तथा निदाघधामानमिव[9] इत्यादि पदैः देवर्षेः कान्तिर्निरूपिता। श्रीकृष्णस्य

दन्तपङ्क्तये द्विजावलिव्याज निशाकरं शुभिः[10] इति प्रयुक्तम्। व्यतिरेकरूपेण तत्रैव सूर्योप्युद्धृतः नयन नियन्तुं समभाविः भानुना[11] इति। तमोध्वंससमर्थस्य सूर्यस्यार्थान्तरेण प्रयोगो यथा ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत् कः[12] तथा उमपानरूपेण यथा सहस्ररश्मेरिव यस्य दर्शनम्[13] इति प्रयोगश्च नूनं चमत्करोति। रावणवर्णन प्रसङ्गे अहस्करस्तावत् तद् वधूनामलङ्कृता इन्दुश्च नर्मसाचिव्य सम्पादयिता यथा अलञ्चकारास्य वधूरहस्करः[14] इति न नर्मसाचिव्यमकारिनेन्दुना[15] इति च। रावणस्य पूर्यां षड्ऋतवः सदा समुपतिष्ठन्ते–तपेन वर्षाः शरदा हिमागमो वसन्तलक्ष्या शिशिरः समेत्य च[16] इति। सर्गान्ते च शिशुपालोऽपि एकदा शिष्टतया रविणा संज्ञितः यथा– युवाकराक्रान्तमहीभृदुच्चकैः असंशयं सम्प्रति तेजसा रविः[17] इति। इत्यञ्च ज्योतिशास्त्रस्य संहिताभागे वर्णिताः सूर्यचन्द्रमसोः सामान्यगुणधर्माः उपर्युद्धृतेष चतुर्दशपद्येषु तथागुम्फिता यया काव्यसौन्दर्यं द्विगुणायते। शिशुपालवधस्य मन्त्रवर्णननामके द्वितीये सर्गे सूर्यचन्द्रमसोः सामान्यगुणधर्माः निम्नलिखितेषु वाक्येषु उल्लिखिताः सन्ति। तथा हि–

दधत्संध्यारूणव्योम–स्फुरतानुकारिणीः[18],इन्धनौघधगप्यग्निस्त्विषा नात्येति पूषणम्[19] पूर्णचन्द्रोदयाकांक्षी दृष्टान्तोऽत्र महार्णवः[20] प्रध्वंसितान्धतमसः तत्रोदाहरणं रविः[21]। पुरः क्लिश्नाति सोमं हि सैहिकेयोऽसुरद्रुहाम्[22] तुल्यऽपराधे स्वर्भानुः भानुमन्तं चिरेण यत्। हिमांशुमाशु ग्रसते तन्म्रदिम्नः स्फुटं फलम्।[23]

तेजस्विमध्ये तेजस्वी दवीयानपि गण्यते।
पञ्चमः पञ्चतपस्तपनोः जातवेदसाम्।।[24]

इत्थम् उपर्युक्तेषु श्लोकेषु सूर्याचन्द्रमसोः स्वरूपं गुणधर्माश्च निरूपिताः। एते हि गणकानाङ्कृते परमोपादेयाः सन्ति।

पुरीप्रस्थान नामके तृतीये सर्गे सूर्यचन्द्रमोभ्यां सहैव नक्षत्रतारागणोऽपि वर्णितः। तद् यथा प्रथम पद्यं सूर्यस्योत्तररायण–दक्षिणायन मार्गस्य चित्रणं विलोकनीयम्– कौवेरदिग्भागपास्य मार्गमागस्त्यमुष्णांशुरिवावर्तीर्णः[25] इति। यात्रायां सूर्यबलाच्चन्द्रबलं बलीयः[26] इति ज्योतिष नियमञ्जानानेनैव श्रीकृष्णेन द्वारकातः प्रस्थाने चन्द्रबलस्य प्राधान्यममानि तत्रेदं पद्यम्–

जगत्पवित्रैरपि तं न पादैः स्प्रष्टुं जगत्पूज्यमयुज्यतार्कः।
यतोबृहत्पार्वणचन्द्रचारु तस्मात पत्रं बिभरांबभूवे[27]।। इति

सर्गान्ते च कविः समुद्रतटे चन्द्रांशुमवलोक्य मौक्तिकं स्मरति क्षिप्ता इवेन्दोः स रूचोऽधिवेलं मुक्तावलीराकलयाञ्चकार[28] इति। शिशुपालवधस्य चतुर्थे सर्गे षोडशभिः पद्यैः ज्योतिषसंहिताविषयाः प्रतिपादिताः सन्ति। तत्र द्वादश कृत्वः, सूर्यस्य सप्तकृत्वः, चन्द्रस्य सकृच्च, नक्षत्रस्य सामान्यगुणाः दर्शिताः। तेषु केचन उद्धरणानि प्रस्तूयन्ते– विन्ध्यायमानं दिवसस्य भर्तुर्मार्गं पुना रोद्धुमिवः[29] विलोचनस्थानगतोष्णरश्मिः[30] सूर्यस्य रथ्या परितः तरुणीरिह नयति रविः[31] इत्यादयः।

एवमेव चतुर्थे सर्गेव चन्द्रवर्णनं अवलोकनीयम्– मुर्ध्नि स्वलत्तुहिनदीधितिकोटिमेनम्[32] हिमधाम्नियाति चास्ताम्।[33] किरणेस्वि हेन्दोः[34] इत्यादयः। एवमेव उत्तम्भितोडुभिः शब्देन एकदा नक्षत्र मण्डलमपि स्मृतम्।

पञ्चमे सर्गे पदद्वयेन सूर्यस्य, पदद्वयेन च चन्द्रस्य सामान्यवृत्तमुपस्थितम्। तत्र सूर्यकिरणसम्पर्कादुल्लसितं गगनं यथा– भास्वर व्यतिकरोलल्लासिताम्बरान्ताः[35] इति चन्द्रकृतीनि वेश्मानि[36] इति च चन्द्राकारं पटमण्डप भूषयतः। एकत्र सूर्यार्ध बिम्बोदये अधोदितो हरिरिवोदयशैलमूर्ध्नः[37] इति प्रयुक्तम् अपरत्र च गिरि श्रृंङ्गञ्चन्द्रार्धमुपहसति अर्धचन्द्र श्रृङ्गैः शिखाग्रगतलक्ष्ममलं हसद्भिः[38] इति।

प्रकृतिवर्णन नामके षष्ठे सर्गे प्रतिश्लोकम् ऋतुविशेषः चारु चारुतां चकारसदुप वर्णितः। संहितास्कन्धे ऋतुनामपि शुभाशुभं फलं प्रोक्तम्, अतः शास्त्रेऽस्मिन् ऋतुधर्माध्ययनमपि महत्वशालि यस्योपपादन सूक्ष्मेक्षिकयात्रसर्गे विहितम्। सूर्याचन्द्र मसावपि पञ्चषु श्लोकेषु चित्रितौ।

तथा हि हरीतिमोद्गमने रवितुरङ्गतनोरूह तुल्यताम्[39] इत्युक्तम, शुभ्रपुष्पं तत्र राशिखण्डं स्मृतम्–

कृशशिखं शशिखण्डमिवच्युतम्[40] इत्यादिना। एवमेव दधतमन्तरिताहिमदिधितिम्[41] इति अशीतकरैः[42] इत्यादिना च सूर्यः स्मृतः।

शिशुपालवधस्य अष्टमे सर्गे जलीयग्रहचन्द्रः सेवमानः प्रदर्शितः प्रियमिवचन्द्रमाश्चकार[43] इत्यादिना। नवमे सर्गे षट्त्रिंशत् पद्येषु सूर्य–चन्द्र–नक्षत्राणां सामान्यसुकुमारगुणधर्माः चित्रिताः। उदाहरणार्थं केचन अत्र प्रस्तूयन्ते–

अभितापसम्पदमर्थोष्णरूचिः निजतेजसामसहमान इव[44] अभवदगतः परिणतिं शिथिलः परिमन्दसूर्यनयनो दिवसः।[45] अस्तमित भानुनभः[46] उदयाचलव्यवहितेन्दुवपुः[47] इत्यादयः। एकादशसर्गे पूर्वं सूर्यस्याचित्रितानि पञ्चविंशतिर्वृत्तानि, ततश्चन्द्रस्य चतुर्दश तारागणस्यापि चत्वारि तानि केचन उदाहरणानि अत्र प्रस्तूयन्ते– जलनिधिजलमध्यादे उत्तार्यतेऽर्कः[48] भास्करेणांशुबाणैः[49] पतति च वरमिन्दुः सोऽपरामेषगत्वा[50], ललितनयनताराः क्षामवक्रेन्दुबिम्बा[51] उपपतिरिव नीचैः पश्चिमान्तेन चन्द्रः[52]।

त्रयोदश सर्गे ज्योतिषस्य द्वाभ्यां योगाभ्यां सह दशषु श्लोकेषु सूर्यचन्द्रौ चित्रितौ स्तः। यथा– क्षपाकर करोत्कराकृति[53] प्रमदा निशाकर मनोरम मुखैः[54] युक्ताः सन्ति।

पञ्चदशे सर्गे अष्टषु श्लोकेषु सूर्यचन्द्र ग्रहयोः गुणधर्माः प्रकाशिताः सन्ति।

शिशुपालवधे यात्रायोग विवेचन यथा–

श्रीकृष्णस्य द्वारकातः इन्द्रप्रस्थाय प्रस्थानमतीव शुभमुहर्ते समजनि। तद्यथा संकेतितम्–

रराज सम्पादकमिष्त सिद्धेः सर्वासु दिक्ष्वप्रतिषिद्ध मार्गम्।
महारथः पुष्परथो रथाङ्गो क्षिप्तं क्षपानाथ इवाधि रूढः[55]।।

उत्तरदिशायाः पुष्यनक्षत्रे सर्वोत्तमः यात्रायोगः भवति। पुष्यः सर्वार्थ साधकः मन्यते।

लग्नयोग विवेचन यथा–

सार्धमुद्धवसीरिभ्यामथासावासदत् सदः गुरुकाव्यानुगां बिभ्रच्चान्द्रीमभिनयः श्रियम्।[56] अत्र देवमन्त्री गुरुः दैत्यमन्त्री च शुक्रः उभौ चेच्चन्द्रेण मन्त्रयेयाताम् नानेन परोयोगो भवितुमर्हति।

शुभयोगः यथा–

अभितः सदोऽथ हरिपाण्डवौ रथादमलांशुमण्डल समुल्लसत्तनू।
अवेतरतुर्नयननन्दनौ नभः शशिमार्गवावुदय पर्वतादिव।।[57]

एवं शिशुपालवधमहाकाव्ये समागत ज्योतिषतत्त्वानां स्वरूपं प्रदर्शितम् अस्मिन् शोधपत्रे। अनेन शिशुपालवधमहाकाव्ये ज्योतिषविवेचनेन ज्ञायते यत् पण्डितकविमाघः अन्यशास्त्रवत् ज्योतिषशास्त्रेऽपि पण्डिताः आसन्।

सन्दर्भ सूची-

1. पाणिनीयशिक्षा	16. तदेव 1/66	31. तदेव 4/2	45. तदेव 9/26
2. सारावली	17. तदेव 1/70	32. तदेव 4/4	46. तदेव . 11/48
3. ऋग्वेदः सूर्यसूक्तम्	18. शिशु. 2/18	33. तदेव 4/14	47. तदेव 11/49
4. बृहत्पाराशरी 3–12	19. तदेव 2/23	34. तदेव 4/67	48. तदेव 11/12
5. बृहत्पाराशरी 3–3	20. तदेव 2/31	35. तदेव 4/19	49. तदेव . 11/20
6. शिशुपालवधम् 1/5	21. तदेव 2/33	36. तदेव 5/3	50. शिशु. 11/65
7. तदेव 1/129	22. तदेव 2/35	37. तदेव 5/52	51. शिशु. 11/65
8. तदेव 1/21	23. तदेव 2/49	38. तदेव 5/56	52. तदेव 13/20
9. तदेव 1/24	24. तदेव 2/51	39. तदेव 5/63	53. तदेव 13/29
10. तदेव 1/27	25. तदेव 4/20	40. तदेव 5/56	54. तदेव 13/61
11. तदेव 1/27	26. तदेव 4/46	41. तदेव–6/43	55. तदेव 3/22
12. तदेव 1/38	27. तदेव 3/1	42. तदेव 8/4	56. तदेव 2/2
13. तदेव 1/53	28. शीघ्रबोधः	43. तदेव 9/1	
14. तदेव 1/58	29. शिशु. 3/2	44. तदेव 9/3	
15. तदेव 1/59	30. तदेव 3/74		

सहायकाचार्यः ,राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् ,नवदेहली ।

 ISSN – 2349-3100

लोकतंत्र और शिक्षा के विकास में जनसंचार माध्यमों की भूमिका

डॉ. सुनीलकुमारशर्मा

लोकतंत्र को व्यापक और शिक्षा को सरल बनाने के लिए बहुत से ऐसे साधनों का उपयोग किया जाता है जिनके माध्यम से एक बृहद् जनसमूह को महत्वपूर्ण और उपयोगी शिक्षा और सूचना दी जा सके, उन साधनों को जनसंचार माध्यम (Mass media of Communication) कहा जाता है। ऐसे साधनों में अखबार, पत्र-पत्रिकायें, टेलीविजन, कम्प्यूटर-इंटरनेट आदि आते हैं।

लोकतंत्र और शिक्षा के विकास में जनसंचार माध्यम की भूमिका को स्पष्ट करने के पूर्व हम देखें कि जनसंचार माध्यम क्या है? एडवर्ड पब्लिकेशन के अनुसार- ''समूह साधन सामान्य तौर पर समाचार-पत्रों, टेलीविजन, रेडियो, उच्चस्तरीय संगीत, चलचित्रों, विज्ञापनों, प्रहसनों, पत्रिकाओं और पुस्तकों के अर्थ में लिये जाते हैं, जो जनसमूह के बाजार का लक्ष्य रखते हैं।''

Mass media is generally taken to mean newspapers, T.V., Radio, Pop, Music, Films, Advertisements, Comics, Magazines and paperback book aimed at mass market. – Blonds Encyclopaedia of Education

उपर्युक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि जनसंचार माध्यमों द्वारा एक ही समय में पूरे जनसमूह को ज्ञान एवं सूचना मिलती है। उदाहरण के लिए समाचारपत्र, रेडियो, टेलीविजन आदि ऐसे साधन हैं जिनके द्वारा एक साथ दुनिया के कोने-कोने में स्थित जन-जन तक सूचना प्राप्त हो जाती है। इन साधनों के अतिरिक्त प्रदर्शनी, मेला, समारोह, शिविर, संग्रहालय, पुस्तकालय आदि भी जनसंचार के साधन माने जाते हैं, क्योंकि इनके द्वारा भी जनसमूह प्रभावित होता है और पूरे समुदाय और समूह को एक साथ विविध प्रकार की सूचनाएं एकसमय में आसानी से प्रसारित की जा सकती हैं।

शिक्षा के प्रति जागरूकता और लोकतांत्रिक सेवाओं से बेखबर लोग शिक्षा और लोकतंत्र से होने वाले लाभों से वंचित ही रह जाते हैं; आये दिन हमें यह देखने को मिलता है कि लोकतांत्रिक सरकार हमारे लोकतंत्र के लिए अनेक लाभकारी योजनाएं और कार्यक्रमों का आयोजन करती हैं, लेकिन जनसंचार माध्यमों की पहुंच से दूर रहने वाले बहुत से लोग इनका लाभ नहीं ले पा रहे हैं, अतः यह तो स्वयं सिद्ध ही है कि जनसंचार साधनों का महत्व शिक्षा और लोकतंत्र के क्षेत्र में बहुत अधिक है।

शिक्षा और लोकतंत्र का परस्पर बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिक्षा के क्षेत्र में लोकतंत्र के सिद्धान्तों तथा मूल्यों का समावेश करने का श्रेय अमरीका के प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री जॉन डीवी को है। उसने बताया है कि 'लोकतंत्रीय समाज में ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक कार्यों तथा सम्बन्धों में निजी रूप से रुचि ले सके। डीवी के इस कथन से लोकतंत्र के सिद्धान्तों तथा मूल्यों का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में किया जाने लगा। ठीक ही है शिक्षित होने पर ही व्यक्ति अपने अधिकारों के सम्बन्ध में जागरूक हो सकता है तथा अपने कर्तव्यों को जनहित के लिए निभाने में तत्पर हो सकता है। [1]

आजादी के बाद भारत के संविधान में प्राथमिक शिक्षा के प्रति प्रतिबद्धता दिखाई गई थी। इसके तहत संविधान के अनुच्छेद 45 में लिखा गया था कि राजसत्ता संविधान लागू होने के दस वर्षों के भीतर ही 14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों के लिए मुफ्त प्राथमिक शिक्षा का प्रावधान करेगी यानि 1960 तक यह काम पूरा हो जाना चाहिए था। पिछले एक-दो दशकों में यह बात का हवाला देना एक रस्म जैसाबनगया है। इसे इतनी बार दोहराया गया है कि इसके बाद राजसत्ता द्वारा ऐसी कई तारिखें तय की गईं और बीत गईं, पर न तो शिक्षा का सर्वव्यापीकरण हुआ और न ही इस असफलता की गहरी पड़ताल हुई। ऐसी स्थिति में प्राथमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण के प्रयासों की गंभीरता पर प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है। इसके बाद शिक्षा का अधिकार भी अभी हाल ही में बनाया गया। इसी नवनिर्मित शिक्षा के अधिकार में लोकतांत्रिक शिक्षा के दर्शन होते हैं। [2]

शिक्षा शिक्षा में बड़े पैमाने पर सुधार की कोषिषों में जुटे केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल अब बच्चों की कक्षाओं में लोकतंत्र लाना चाहते हैं। उनका कहना है कि बच्चों की पढ़ाई और व्यक्तित्व विकास के मामले में उनकी आकांक्षाओं को नजर अंदाज करना अलोकतांत्रिक है। आज तक लोकतंत्र को केवल राजनीति से जोड़कर देखा गया, इसे कभी भारतीय कक्षाकक्ष में नहीं समाहित किया गया। कक्षाओं में लोकतंत्र को कैसे समाहित किया जाये? यह मूलभूत मुद्दा है। छात्रों के माता-पिता और शिक्षक उनकी पढ़ाई और व्यक्तित्व के विकास के मामले में अपना अनुशासन चलाते समय उनकी आकांक्षाओं को नजर अंदाज करते हैं-यह अलोकतांत्रिक है।

कक्षा में विद्यार्थी के द्वारा पूछे गये प्रश्न का सही और यथोचित उत्तर देना कक्षा की लोकतांत्रिक प्रणाली है। कक्षा में प्रत्येक विद्यार्थी को प्रश्न का उत्तर जानने का अधिकार है। अक्सर लोगों की यह मान्यता रहती है कि कक्षा में शिक्षक का शासन होता है, लेकिन देखा जाये तो वास्तव में कक्षा में प्रत्येक विद्यार्थी का मुख्य शासन है, क्योंकि बिना विद्यार्थी के अध्यापक की खाली कक्षा में कोई भूमिका नहीं है।

कक्षा में छात्र और शिक्षक के मध्य होने वाली अन्तःक्रिया में छात्र और अध्यापक दोनों की बराबर सहभागिता होने से कक्षा का लोकतंत्र संतुलित बना रहता है। इसी सम्बन्ध में फ्लैण्डर्स ने अपनी दशवर्ग अन्तःक्रिया प्रणाली में इसके लिए निश्चित बिन्दु निर्धारित किये हैं। अन्तःक्रिया विश्लेषण का अर्थ है- ऐसी प्रणाली जिसके द्वारा कक्षा-कक्ष में घटने वाली घटनाओं का व्यवस्थित तथा वस्तुनिष्ठ निरीक्षण कर वैज्ञानिक विष्लेशण कियाजाता है।[3]

ग्राम एवं दूर-दराज तक संचार तकनीकी का विकास-

 ISSN – 2349-3100

आज के युग में हम शिक्षा और विकास की बात करते हैं, लेकिन ग्रामीण स्तर पर देखें तो स्थिति गंभीर है। ग्रामीण विकास को वर्तमान स्तर तक लाने में मीडिया ने प्रयास जरूर किया है, लेकिन 1991 के उदारीकरण और फरवरी 2009 में मीडिया में विदेशी निवेश भी छूट के बाद अब स्थिति बदलने की संभावना है और बदली भी है। भोपाल में राजबहादुर पाठक स्मृति व्याख्यानमाला में मीडिया की विफलताएं विषयपर बोलते हुए वरिष्ट पत्रकार श्री रामबहादुर राय ने कहा कि आज मीडिया से ग्रामीण मुद्दे और हाषिए के लोग दूर होते जा रहे हैं, जिसके पीछे मुख्य वजह है मीडिया में विदेशी पूंजी की छूट। श्री राय ने ग्रामीण मुद्दों, हाषिए के लोगों और वंचितों की आवाज का विकल्प खोजने के लिए हमें समानान्तर मीडिया को विकसित करना होगा।

हमारे विशाल देश भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले अधिक से अधिक लोगों तक सरल, सहज भाषा में शिक्षा की ज्योति का प्रसार करने में जनसंचार साधनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। उदाहरणस्वरूप महिला एवं बाल विकास, स्वास्थ्य शिक्षा, उर्जा के वैकल्पिक स्रोत की जानकारी, भूमि सरंक्षण, पर्यावरण के प्रति जागरूकता, शिक्षा का महत्व, दुर्व्यसनों के दुश्परिणाम आदि की जानकारी रेडियो, चलचित्र, अखबार आदि के माध्यम से ग्रामवासियों, अशिक्षित महिलाओं, बच्चों और प्रौढ़ों को दी जा सकती है, लेकिन इसके लिए मीडिया को इस कदर विकसित करना होगा कि वह ग्रामवासियों और हाशिए के लोगों तक अपनी आवाज पहुंचा सके।

भारत में दूरदर्शन में उपग्रह तकनीक का प्रयोग सन् 1975 से प्रारम्भ किया गया। भारतीय इनसेट प्रणाली के द्वारा दुर्गम और पिछड़े क्षेत्र के लोगों के लिए दूरदर्षन कार्यक्रम पहुंचाये जा सकते हैं। इसके द्वारा नवीन सूचनाएं शीघ्रता से दी जा सकती हैं तथा मौसम विज्ञान, पर्यावरण जागरूकता,शैक्षिकविकास, आदि से सम्बन्धित नवीन जानकारियां प्रदान की जा सकती हैं।[4]

जनसंचार माध्यमों की भाषा-

लोकतंत्र को उद्देश्यपूर्ण और निरन्तर प्रवाहमान बनाये रखने के लिए भाषा की भूमिका भी खासा महत्व रखती है। इस लिहाज से हम देखते हैं तो पता चलता है कि मीडिया ने आजादी के बाद नब्बे के दशक तक भाषा की मर्यादा को बनाए रखा, लेकिन इसके बाद मीडिया के सभी घटकों ने प्रतिस्पर्धा के कारण सनसनीखेज और चटकारेदार जिस भाषा को प्रश्रय दिया, वह चिंता का विषय बनी हुई है, क्योंकि भाषा राष्ट्र के विकास का प्रमुख हथियार होती है, लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि भारत का मीडिया आज टीआरपी की होड़ में लोकतांत्रिक मूल्यों को तरजीह नहीं दे रहा है। चूंकि भाषा स्वयं की संस्कृति लेकर चलती है जिससे लोकतंत्र समृद्ध होता है।

जनसंचार माध्यमों की भाषा कैसी हो- इस सन्दर्भ में दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बीरेन्द्र सिंह रावत का लेख, जो शिक्षाविमर्ष पत्रिका में जनवरी-फरवरी 2011 के अंक में प्रकाशित है, में कहा गया है कि- "भाषा शिक्षण के संदर्भ में शिक्षण प्रक्रिया तथा लोकतंत्र के विचार के मध्य सूत्र तलाशने हेतु अनेक बातों में से एक बात यह देखनी होगी कि भाषा की कक्षाओं का लोकतंत्रीकरण हो रहा है या नहीं।भाषा के लोकतंत्रीकरण को निम्नलिखित प्रश्नों के जवाब में खोजा जा सकता है:-

प्र. 1 क्या भाषा की ताकत को समझने तथा उसका उपयोग करने के अवसर शिक्षार्थियों को उपलब्ध हैं ?

प्र. 2 क्या भाषा शिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षार्थियों के जीवनानुभवों को जगह मिलती है ?

प्र. 3 क्या भाषा शिक्षण की प्रक्रिया शिक्षार्थियों को विभिन्न जीवनानुभवों को समझने का अवसर देती है ?

प्र. 4 क्या भाषा शिक्षण की प्रक्रिया वैकल्पिक जीवनानुभवों को सृजित करने का अवसर देती है ?

किसी भी योजनाबद्ध काम में उस काम से संबंधित मान्यताएं अन्तर्निहित होती हैं। भाषा के शिक्षण पर भी यह बात लागू होती है। भाषा के शिक्षण को भाषा तथा शिक्षण संबंधी मान्यताएं प्रभावित करती हैं। भाषा के संदर्भ में कुछ आम मान्यताएं हैं जिनका प्रभाव भाषा के शिक्षण में देखा जा सकता है।"[5]अक्सर यह देखा जाता है कि अखबार और जनसंचार माध्यमों की भाषा सनसनीखेज और मुहावरेदार बनाने की चेष्टा की जाती है। यह भाशा जनता का ध्यान आकृश्ट करती है। अखबार आदि की भाशाका पाठकों पर सीधा प्रभाव पड़ता है। जनसंचार के माध्यमों से लोकतंत्र में जनता के हितार्थ निर्मित नीतियों आदि का लाभ जनता तक पहुंच सके- इसके लिए सशक्त एवं आकर्शक भाषा का प्रयोग आवश्यक है।

अखबार आदि जनसंचार के माध्यमों में हाईलाईट होने वाली सूचनाओं में अधिकांश खबरें अपराधशास्त्र पर आधारित होती हैं। आज का अखबार अपराध, हिंसा आदि से भरा होता है, जबकि ऐसी खबरों को कम से कम प्रकाशित करना चाहिए, क्योंकि ऐसी खबरें अपराध और हिंसाको कम करने की बजाय बढ़ावा अधिक देती है। लोगों के दिमाग में वे खबरें वैसा ही करने की प्रेरणा देती है। एक सर्वे के अनुसार तीन वर्ष का बच्चा जब टीवी देखना शुरू करता है और उस घर में केबल कनेशन पर 12-13 चैनल आते हों तो प्रतिदिन पांच घण्टे के हिसाब से 20 वर्ष की उम्र तक बालक की आंखें 33000 हजार हत्या और 72000 बार अश्लिलता देख चुकी होती हैं। यहां एक बात गंभीरता से विचारणीय है कि मोहनदास करमचंद गांधी नाम का एक बालक एक या दो बार हरिश्चन्द्र नाटक देखकर सत्यवादी बन गया और वही बालक महात्मा गांधी के नाम से आज भी पूजा जा रहा है। हरिष्चंद्र का नाटक जब दिमाग पर इतना असर करता है कि उस व्यक्ति को जिन्दगीभर सत्य और अहिंसा का पालन करने वाला बना दिया तो जो बालक 33 हजार बार हत्या और 72 हजार अष्लील दृष्य देख चुका है वह क्या बनेगा? याद रखें कि बच्चे देष की असली सम्पत्ति है। उन्हें ऐसे वातावरण उपलब्ध करायें जिससे वे भविष्य मं े आपके व देश के लिए उपयोगी सिद्ध हो। राष्ट्र के नवनिर्माण में सहयोग करें। ऐसे प्रचार साधनों का बहिष्कार करें जो देश के भावी कर्णधारों को। कहीं ऐसा न हो कि बच्चे समाज और राष्ट्र के लिए मुसीबत बन जायें। माता-पिता, सरकार व देश के कर्णधारों का यह नैतिक दायित्व है कि वे युवा पीढ़ी को कुप्रवृत्तियों से बचाने के लिए उचित कदम उठायें। गलत बातें सोचकर तथा सिनेमा के कुप्रभाव का शिकार होकर युवा पीढ़ी जीते जी नर्क का दुख भोगने पर विवश हो रही है।

शिवपुरी मध्यप्रदेश से 65 किमी दूरी पर स्थित अरोरा गांव की एक घटित घटना है। आजकल खुलेआम दिखायी जाने वाली टीवी फिल्मों से प्रेरणा पाकर 16 वर्षीय मनोज और 13 वर्षीय रामनिवास ने अपने मालिक के पुत्र शानु का अपहरण कर उसके पिता से धन की मांग की और शानु की हत्या कर दी। 17 जनवरी 2002 को शानु का मृत शरीर मिला। दोनों किशोरों ने पुलिस को आत्मसमर्पण किया और अपराध कबूल किया। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि यह प्रेरणा उन्होंने फिल्म देखकर पाई थी।

22 अप्रैल 1999 को आगरा से प्रकाशित समाचार पत्र ''दैनिक जागरण'' में दिनांक 21 अप्रैल 1999 को वाशिंगटन अमेरिका में घटी एक घटना प्रकाषित हुई। इस घटना में किशोर उम्र के दो स्कूली विद्यार्थियों ने डेनवर (कॉलरेडो) में दोपहर को भोजन की आधी छुट्टी के समय में कोलंबाइन हाईस्कूल के पुस्तकालय में घुसकर अंधाधुंध गोलीबारी की, जिससे कम से कम 25 विद्यार्थियों की मृत्यु हुई, 20 घायल हुए। विद्यार्थियों की हत्या के बाद गोलीबारी करने वाले किषोरों ने स्वयं को भी गोलियां मारकर मौत के घाट उतार दिया। हॉलीबुड की मारा-मारी वाली फिल्मी अंदाज से हुए इस अभूतपूर्व कांड के पीछे भी चलचित्र ही मूल प्रेरक तत्व है। यह बहुत ही शर्मनाक बात है। भारतवासियों को ऐसे सुधरे हुए राष्ट्र और आधुनिक कहलाये जाने वाले लोगों से सावधान रहना चाहिए।[6]

सिनेमा, टीवी का दुरुपयोग बच्चों के लिए अभिशाप है। इससे चोरी, मदिरा, भ्रष्टाचार, हिंसा, बलात्कार, निर्लज्जता जैसे कुसंस्कारों से बाल-मस्तिष्क पर गन्दा प्रभाव पड़ता है, इसलिए टीवी, सिनेमा के विविध चैनलों का उपयोग ज्ञानवर्धक कार्यक्रम, आध्यात्मिक उन्नति के लिए, अध्ययन के लिए कार्यक्रम तक ही मर्यादित करना चाहिए। प्रसिद्ध विद्वान् डॉ0 कीनो फेरियानी ने लिखा है- ''निरन्तर 20 वर्ष तक मैंने अपराध, मनोविज्ञान तथा बाल मनोविज्ञान का अध्ययन किया है और हजारों बार मुझे इस कष्ट भरे सत्य को स्वीकार करने के लिए मजबूर होना पड़ा है कि 80 प्रतिशत बच्चों को अपराधी मनोवृत्ति वाला बनने से बचाया जा सकता था, यदि उनके मां-बाप समय रहते उन्हें अच्छी शिक्षा, ज्ञान, ऊंची विचारधारा से परिचय करवाकर उन्हें वीरता, देशभक्ति, मानव-कल्याण का पाठ पढ़ाते। इसप्रकार उनके जीवन का समूचा रूप बदल सकता था।

यह मनोविज्ञान ही है कि जब हम किसी एक विज्ञापन को बारम्बार देखते हैं तो एक न एक दिन उस वस्तु को क्रय करने के लिए हम तैयार हो जाते हैं, वैसे ही बार-बार हिंसा और अपराध की खबरें हम पढ़ते हैं तो वे हमारे दिमाग पर बुरा असर करती हैं। अतः ऐसी खबरों को कम से कम और नगण्य रूप से छोटी खबरें बनाना चाहिए।

ठीक इसके विपरीत वांछित व्यवहार और सकारात्मक अभिवृत्तियों की खबरों को रोचक और आलंकारिक भाषा में प्रकाषित करना आज के जनसंचार माध्यमों के लिए अत्यावश्यक है।ऐसा माना जाता है कि आत्मनिष्ठता की भाषा से मीडया को बचना चाहिए, लेकिन सकारात्मक अभिवृत्तियों और वांछित व्यवहार की खबरों के लिए थोड़ा-बहुत आत्मनिश्ठतापूर्ण तथ्य भी प्रकाषित किये जा सकते हैं,जिससे लोग उससे प्रेरणा ले सकें।

इस सन्दर्भ में संचार तकनीकी के क्षेत्र से जुड़े लोगों का यह कहना है कि ऐसे अखबार और चैनल को चलाना बहुत कठिन है। अखबार की बिक्री और चैनल की टीआरपी दर को संभालने के लिए हमें ऐसा करना होता है कि हिंसा, हत्या, बलात्कार आदि के केसेज अधिक फोकस रूप से छापने होते हैं। मेरा कहना है कि ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। किसी भीअच्छी बात को शुरू में संघर्ष जरूर करना पड़ता है, लेकिन बाद में उसे ही चलते हुए देखाजा सकता है और इसके अलावा जिसको हिंसा, अश्लिलता आदि ही देखनी है उसे तो और भी अनेक साधन उपलब्ध हैं।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विवरण से यह सिद्ध होता है कि लोकतंत्र और शिक्षा के विकास में जनसंचार माध्यमों की भूमिका बहुत अधिक है, अतः इनके उपयोग में सावधानी के साथ-साथ नवाचार का प्रयोग भी आवश्यक है।

सन्दर्भ सूची-

1 शिक्षा के सिद्धान्त, नवरतनस्वरूप सक्सेना, आर लाल बुक डिपो, मेरठ, पृष्ठ- 198
2 शिक्षा और जनआन्दोलन, साधना सक्सेना, ग्रंथ शिल्पी प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृष्ठ- 17
3 एस.पी. कुलश्रेष्ठ, शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
4. पर्यावरण शिक्षा, शा. मिश्रा, न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद
5. बीरेन्द्र सिंह रावत का लेख, शिक्षा विमर्श पत्रिका, जयपुर, जनवरी-फरवरी 2011 पृष्ठ-31
6. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 21 अप्रैल 1999
7 ऋग्वेद
8 पाणिनीयशिक्षा
9 Dr. Kapildev Dvivedi "Vedon me Samajshastra
10 मनुस्मृतौ
11 बौधायनगृह्यपरिभाषासूत्र

सहायकाचार्य(सं अ.) शिक्षाशास्त्रविभाग राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थान क.जे सोमैया संस्कृत विद्यापीठ,मुम्बई

 ISSN – 2349-3100

योग के माध्यम से आध्यामिक विकास

✍ डॉ.आरती शर्मा

"अध्यात्म की है जिन्हें भूख और प्यास।

करते परमात्मा पूरी सदा उनकी आस ।।"

मनुष्य के अन्दर एक दिव्यशक्ति है ।एक चिंगारी है जो आत्मा या जमीर के नाम से जानी जाती है ।वही शक्ति उसके हृदय में बैठी हुई है । जो कि परमात्मा का प्रतिनिधित्व करती है। और अच्छे बुरे की पहचान करवाती है । योग का ध्येय है – मन पर चढ़े बिषयों के मैल को परिमार्जित कर , उस चिंगारी को दिव्य रूप के दर्शन कराना। योग दर्शन के सारे विधान का उद्देश्य चित्त की एकाग्रता को पाना है ।और उसे पाने के बाद उससे भी आगे बढ़कर चित्त की वृत्तियों को थाम देना है ।जिससे आत्मस्वरूप के दर्शन होते है। मनोविज्ञान कहता है । man seeks pleasure and shun pain.-J.S mill.अर्थात् प्राणी सुख के पीछे भागता है । और दुःख के परे भागता है । अब हम सोचे की सुख क्या है ।सु का अर्थ का सुहावना और ख का अर्थ है - इन्द्रियाँ अर्थात् जो इन्द्रियों को सुहावना लगे वह सुख है । मनोवैज्ञानिक शब्दों में इसे इन्द्रिय सुख (sexual pleasure) कहा जाता है । यह आध्यात्मिक सुख , आनन्द नही है । जीव का प्रकृति से संयोग मन के माध्यम से होता है । इसीलिए कहा गया है ।" **मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" (ब्रह्मबिन्दु उपनिषद्-2)** अर्थात् मन ही जीव का बन्धन या मोक्ष का कारण होता है । इस मन को योगदर्शन में चित्त कहा गया हैं। इसीलिए पतञ्जलि जी ने **योगचित्तवृत्तिनिरोधः चित्त** की वृत्तियों के निरोध का नाम योग है ।चित्त समुद्र की भाँति वृत्तियों का भण्डार है । या कहो कि प्याज की भाँति वृत्ति रूपी परतों की पोटली है। जैसे- समुद्र में एक कंकड फेंकने पर उसकी सतह पर असंख्य लहरें वृत्तकार रूप में पैदा हो जाती है । और पानी के नीचे पड़े शंख को देखने से रोकती है। वैसे ही राग –द्वेष आदि वृत्तियाँ चित्त को विचिलत करती रहती है ।और आत्मा के स्वरूप को नही देखने देती है ।योगदर्शन का उद्देश्य आत्मदर्शन व परमात्मा का साक्षात्कर है। यह एक आध्यामिक कार्यशाला है । जिसमें आध्यामिक विषयों का ज्ञान एंव साक्षात्कार होता है । समाधि पाद में कहा गया हैं- **वृत्तिसारूप्यमितरत्र्** अन्यथा आत्मा रहेगी,वृत्ति स्वरूप से लिप्त इसी को काव्यात्मरूप में इस प्रकार कहा गया है ।

"अज्ञानवश आत्मा , अपने स्वरूप को भूलकर ,चढ़ा लेता है। आवरण ,वृत्तियों का अपने ऊपर ।
है देखता वही जो, चित्त वृत्तियाँ दिखायें उसे, होता स्वयं मुदित,व्यथित,जैसे वृत्तियाँसुझाएँ उसे।
विचरण करता सदा, मन के गढ़े प्रपंच में, जब तक न पाता दक्षता, वृत्तियों के विध्वंस में।।"

योग साधना के आठ अंग हैं **–यम नियम ,आसन ,प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा,ध्यान और समाधि** ।योगरूपी सीढ़ी के किसी चरण पर पदार्पण करने से जीवन कृत कृत्य हो जाता है ।योग के प्रथम चरण 'यम' का पालन करने से अर्थात् सत्य अहिंसा ,अस्तेय,ब्रह्मचर्य आदि को जीवन में ढ़ालने से मनुष्य का कायाकल्प हो जाता है ।योग के दूसरे चरण 'नियम' में संतोष, ईश्वर प्राणिधान से जीवन का नजरिया ही बदल जाता है ।तथा प्राणायाम और प्रत्याहार से चित्त एकाग्र करने में सहायता मिलती है । धारणा और ध्यान से चित्त एकाग्र होता है । जिससे किसी भी विषय पर सोचने या कार्य करने में दक्षता प्राप्त होती है । आध्यात्मिक विषयों पर ध्यान लगाने से साधक को आध्यात्मिक सिध्दियाँ प्राप्त होती है।

योग की परिभाषा-

1. योगदर्शन के भाष्यकार वाचस्पति मिश्र के अनुसार-**सम्योगो योगःइति उक्तो जीवात्मपरमात्मनोरिति** अर्थात् जीवात्मा और परमात्मा के संयोग को योग कहते है।
2. आदिशंकराचार्य के अनुसार **तत्वदर्शनोपायो योगः**अर्थात् योग एक ऐसा उपाय है।, साधन है ,जिससे परम तत्व एवं सत्य स्वरूप ब्रह्म के दर्शन होते है ।
3. लिङ्गपुराणके अनुसार "**सर्वार्थ विषयप्राप्तिरात्मनो योग इति उच्यते** " कहने तात्पर्य यह है कि आत्मा को निखिल विषय की प्राप्ति होना योग कहा जाता है ।

योग की अवस्था- योग की पाँच अवस्था होती है। 1.क्षिप्त 2.मूढ़ 3.विक्षिप्त 4.एकाग्र 5.निरूध्द । अन्तिम दो अवस्थाएँ (एकाग्र और निरुध्द) व्यक्ति को आध्यात्मिकता की ओर ले जाती है इन अवस्थाओं का वर्णन इस प्रकार है –

भटकता है व्यर्थ जब ,चित्त होता क्षिप्त अवस्था में, जब न हो अंकुश लगाने की इच्छा ,तो हो मूढावस्था में,।
जब टिके कुछ क्षण पर फिसल जाए,तो होता है विक्षिप्त, जब साधना से हो ऐच्छिक पदार्थ पर केन्द्रित, तो है एकाग्रिता
जब चित्त की वृत्तियाँ हो जाएँ लुप्त, तो होता है चित्तवृत्ति निरोध।।

प्रसिध्द शिक्षाशास्त्री महर्षि अरविन्द घोष ने कहा कि योग का चरमोद्देश्य व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास करना है। और उन्होनें बताया है कि –योग का लक्ष्य जन्म मरण से छूटकर ऐसी मुक्ति पाना नहीं है। जो इस दुनिया में सबसे अलग हो बल्कि इसका लक्ष्य तो इस पृथ्वी पर दिव्य आनन्द को उतार लाना है आगे श्री अरविन्द जी कहते है कि हमें व्यक्तिगत रूप से कोई आवश्यकता नही है । कारण- आत्मा नियत मुक्त है और बन्धन केवल भ्रम है हम तो बध्द होने का दावा करते है । वास्तव में हम बद्ध नहीं है। हम लोग विचार करके देखे कि जो योग पृथ्वी को ही स्वर्ग बनाने की क्षमता रखता है , वह कितना महान होगा। अरविन्द जी का मानना है । कि जब पृथ्वी पर से सभी दुःखों की समाप्ति हो जायेगी, रोग -क्लेश इत्यादि समा जायेगे तो पृथ्वी स्वर्ग में बदल जायेगी। योग के कई प्रकार हैं। जैसे कर्मयोग , भक्तियोग, राजयोग, ज्ञानयोग,हठयोग,मंत्रयोग,लययोग,इत्यादि अष्टागं योग के अन्तिम चार अंग " **प्रत्याहार -धारणा -ध्यान समाधि"** मनुष्य को आध्यात्मिकता की ओर ले जाते है । अतः हम निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं । कि जीव का प्रकृति से सम्बन्ध अज्ञानवश होता है । जीव आनन्द की खोज में प्रकृति-पदार्थो से मिलने वाले सुख को ही आनन्द समझ बैठता है और संसार रूपी मोह में अपने को सम्मिलत कर लेता है और फँस जाता है। इसीलिए पृथ्वी को मोहिनी कहा गया है। ऐसी परिस्थिति जीव को योग आदि मार्गो के द्वारा मन को नियन्त्रित करना चाहिए और इन्द्रियों को उचित कार्यो में लगाकर उद्देश्य की पूर्ति के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए तथा अपनी मंजिल को प्राप्त करना चाहिए ।

जैसा कि योग कि प्रंशसा करते हुए विद्वानों ने कहा है **'तदा द्रष्टुः स्वरुपेऽवस्थानम् '** कहने तात्पर्य यह है कि जब चित्त नियन्त्रण में होता है तो दक्षता हांसिल हो जाती है तब आत्मा अपने स्वरूप में स्थित हो जाती है ।

योग के बिषय विद्वानों ने काव्यात्मक रूप में बताया है –" योग का उद्घोषित विषय है- आत्मसाक्षात्कार, और आत्मा का परमात्मा का साक्षात्कार। जब होती है आत्मा, स्वरूप में स्थित, स्वतः स्वयं को पाता है ब्रह्मस्वरूप में स्थित ।। "

इस प्रकार हमारे जीवन में योग शिक्षा का ज्ञान अपेक्षित है जिससे आध्यत्मिक विकास हो सके ।

पादटिप्पणी-

1. डॉ. त्रिलोकी चन्द , पातञ्जल योग और श्री अरविन्द योग का तुलनात्मक अध्ययन।
2. विजयकान्त राय चौधरी - श्री अरविनद का योग
3. विद्यासागर वर्मा –योगदर्शन काव्य व्याख्या ।
4. आचार्य उदयवीर शास्त्री- योगदर्शन।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1.वैदिक योगसूत्र
2.कठोपनिषदि- २/१/
3.योग प्रतिभा-डा. प्रतिभारानी द्विवेदी
4.पातञ्जल योग-दर्शन का सरल सुबोध अध्ययन-डा. सत्यदेव चौधरी
5.पातञ्जलयोगदर्शनम्
6.पातञ्जलयोगदर्शनम्- जैन योगसिद्धान्त और साधना

सहायकाचार्य(सं अ.)साहित्यविभाग,राष्ट्रिय संस्कृत सस्थान, जयपुर परिसर

 ISSN – 2349-3100

कबीरदास और उनकी भाषा

✍डा. गीता दुबे

मसि कागद छुयो नहिं , कलम गहि नहि हाथ ।
चारिक जुग को महातम , मुखहि जनाइ बात ।

निर्गुण ज्ञानाश्रयी संत कवि कबीर दास निरक्षर थे । उन्होने अपने निरक्षर होने के संबंध मे स्वयं ही एक साखी के माध्यम से बताया है ।अभिव्यक्ति हेतु भाषा वह साधन है जिसमें भावों का संवेदन और सम्प्रेषण , अभिव्यञ्जन और प्रदर्शन सम्मिलित रहता है । कबीरदास की भाषा को विभिन्न विद्वानों नें विभिन्न नामों से सम्बोधित किया है । बाबू श्यामसुन्दरदास ने इनकी भाषा को ,, पञ्चमेल खिचडी ,,कहा है । आचार्य रामचन्द्रशुक्ल ने साखी की भाषा के विषय में लिखा है ,, इसकी भाषा सधुक्कडी अर्थात् राजस्थानी , पञ्जाबी मिली ख़डी बोली है पर रमैनी और सबद में गाने के पद हैं जिसमें काव्य की ब्रजभाषा और कहीं – कहीं पूर्वी बोली का भी व्यवहार है । ,,1 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर की भाषा का विश्लेषण करते हुए लिखा है - ,,भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था ।वे वाणी के डिक्टेटर थे । जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया – बन गया तो सीधे – सीधे , नहीं तो दरेरा देकर । भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार सी नजर आती है ।उसमें मानों ऐसी हिम्मत ही नहीं है कि इस लापरवा फक्कड की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके और अकह कहानी को रूप देकर मानोग्राही बना देने की तो जैसी ताकत कबीर की भाषा में है वैसी बहुत कम लेखकों में पाई जाती है । ,,2 डा. शिव कुमार शर्मा ने कबीर की भाषा को खिचडी भाषा कहा है । कबीरदास ने स्वयं अपनी भाषा के विषय में स्वयं कहा है –

बोली हमरी पूरव की , हमकौ लखै न कोय ।
हमको तो सोई लखै जो घुर पूरव का होय ।।

कबीरदास धर्मगुरू थे उनका व्यक्तित्त्व बहुआयामी था । उनकी भाषा के विश्लेषण हेतु एक ओर दार्शनिक तत्वों की व्याख्या आवश्यक हैतो दुसरी ओर कवित्व गुनों की बहुलता का विश्लेषण भी । कबीरदास के दोर्शनिक सिद्धान्तों की व्याख्या के लिए इनकी कवीता में उल्लिखित ब्रह्म , आत्मा , माया ,जगत एवं जीवन आदि विषय को समझना आवश्यक है जो उनके काव्य का प्राणतत्व है , कवित्व गुणों की दृष्टा से शब्दचयन , अलंकार – योजना , छन्द –विधान आदि को जानना भी अनिवार्य है । इस प्रकार कबीर की भाषा का दार्शनिक और काव्यात्मक रूपों में
वर्गीकरण किया जा सकता है ।

दार्शनिक वर्गीकरण

कबीरदास निर्गुणब्रह्म के उपासक थे । इस निर्गुणब्रह्म के संबंध में कबीरदास ने जिन दार्शनिक तत्वों का निरूपण किया है उसके स्वरूप को स्पष्ट करनेवाली भाषा का अध्ययन आवश्क है । ब्रह्म के निरूपण में कबीरदास ने जिस निर्गुणब्रह्म की चर्चा की है उसका न कोई रूप है , न आकार है , न आदि और न अन्त है ऐसे निराकार ब्रह्म की अभव्यतक्ति कबीरदास ने इतनी सरलता सुगमता से किया है कि पाठक उक्ति में स्थित सत्य को समझ जाता है । जैसे –

जाके मुँह माथा नहीं , ना ही रूप सरूप ।
पुहुप वास से पातला , ऐसा तत्व अनूप ॥

आत्मा संबंधी स्वरूप निर्धारण में भारतीय दर्शनपद्धति द्वैत एवं अद्वैत के सिद्धान्त सेकबीर भी प्रभावित रहे । इन्होने आत्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं माना है । कबीरदास ने अपने आत्मा एवं परमात्मा संबंधी सत्यानुभव को बहुत ही सहज भाषा में व्यक्त किया है –

जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी ।
फूट्यो कुंभ जल जलहि समाना , यह तत् कथ्यो गियानी ॥

इसी प्रकार कबीर की कविताओं में उल्लिखित माया वह कारण है जो जीव और परमात्माके बीच आवरण का काम करती है एवं जीव में काम क्रोध आदि मानसिक वृत्तियों का प्राकट्य होता है । कबीरदास ने माया के इस प्रपञ्च को मिथ्या कहकर अनेक प्रकार से इसकी व्यञ्जना की है । उदाहरण के लिए – माया महा ठगनी हम जानी कहकर ठगनी से तुलना कर दिया ।

ISSN – 2349-3100

जीवन एवं जगत का स्वरूप निर्धारण कबीरदास ने व्यवहारिक दृष्टिकोण से किया है। जगत को क्षणभङ्गुर माना गया है तो उसमें स्थित जीवन भी क्षणभङ्गुर ही है। कबीरदास ने बडे मर्मस्पर्शी ढंग से एवं सर्वसाधारण की समझ में उतरनेवाली भाषा में जीवन की रहस्यमयता को निरूपित किया है–

मालन आवत देख करि कलियाँ करी पुकार।
फूले फूले चुनि लिए काल्हि हमारी बार॥

सन्त कबीरदास की भाषा में दार्शनिक तत्वों की गंभीरता को इतनी सहजता से वहन करने की शक्ति है कि सहज स्वीकार नहीं होता है। भाषा की इस समर्थता एवं शक्ति का कारन कबीर की मौलिक एवं सहज अनुभूति ही हैदार्शनित तत्वों की सरल सुगम एवं सर्व ग्राह्य भाषा के अध्ययन के पश्चात इनके काव्य भाषा संबंधी स्वरूप को जानना आवश्यक है।

भाषा का स्वरूप

भाषा न केबल शब्दों का समूह है वल्कि इसमें अभिव्यक्ति की एवं सम्प्रेषणीता की क्षमता पोती है। इसके अतिरिक्त कबीर की भाषा के वे साधन जो उसे कवित्व शक्ति से सम्पन्न करते हैं उसका विचार करना महत्वपूर्ण है।

शब्द विधान -

शब्द चयन की दृष्टि से कबीर की भाषा लोक निकट है। शब्दचयन में ऐसी उन्मुक्तता प्राप्त है कि जो इनकी अनुभूतियों को साकार करने में पूर्ण रूप से समर्थ है कबीरदास के काव्य में तत्सम तद्भव देशज और विदेशी शब्दों का प्रयोग दिखाई देता है। इनके काव्य में तत्सम शब्दों का प्रयोग बहुलता से हुआ है इसके साथ ही जनसाधारन के बीच की बोली को अधिक महत्व दिया है लोहार , कुंभकार , नाई जुलाहा , किसान , आदि के जीवन और व्यवसाय से जिन शब्दों को लिया है उनमें अधिकांश अव अप्रभावित हो चुके है। कुछ तो इतने व्यंजक और अर्थ गम्भीर्य है कि उनके पर्याय खोजना कठिन है। जैसे – बजनिया , तितरबानी , पासंग , तालावेलि आदि। तद्भव शब्दों के प्रयोग में भी कबीर पीछे नहीं है। अनेक तद्भव शब्द ऐसे है जिन्है पहचानना भी कठिन हो जाता है वे। जैसे स्यंहा (सिंह) विनान (विज्ञान) म्यंत (मित्र)। इसके साथ ही लोकव्यवहार में प्रचलित आग , दुध , बहरा , गाई , अँधला आदि शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है। तत्सम तद्भव के साथ ही देशज शब्दों का भी का खूब प्रयोग कबीर ने किया है। उदाहरण के लिए –

माटी कहै कुम्हार से तू क्यों रूंधे मोहि।
एक दिन ऐसा आयेगा मै रूंधूगी तोय॥

कबीर के काव्य में विदेशी शब्दों का भी प्रयोग स्पष्ट दिखाई देता है। विदेशी शब्दों में विशेषकर अरबी फारसी शब्दो का प्रयोग अधिक दिखाई देता है इनकी भाषा में व्रज , अवधी , राजस्थानी , पंजाबी खडीबोली के साथ ही भोजपुरी का भी प्रभाव दिखाई देता है।

अलंकार योजना - अलंकारयोजना की दृष्टि से देखाजाय तो उनके काव्य में अलंकारों का विधिवत् प्रयोग भाषा को उत्कृष्ट बनाता है कबीरसाहित्य में प्रचलित अलंकारों के साथ रूपक अलंकार की सुंदरययोजना सर्वत्र देखी जा सकती है। कबीर रूपक कि योजना में बडे कुशल थे। उनके संग रूपक जीवन के विभिन्न स्थलों से सम्वन्धित है।

व्यंग्यविधान – कबीर साहित्य का मूल स्वर व्यंग्यात्मकता में निहित है। सभी धर्मो में स्थित बाह्यऽम्बर मिथ्याचार अंध विश्वास एवं रूढियों आदि पर जोरदार शब्दो में प्रहार किया है। कबीर के विषय में रामस्वरूपचतुर्वेदी ने लिखा है - ,, समाज सुधार की भाव या हिन्दू मुश्लिम एकता एक प्रमुख वस्तु थी जिसे उन्होंने अपनी काव्य संवेदना में ढाला।

उलटवासियों का प्रयोग – संत कबीर ने सबसे अधिक उलटवासियों का प्रयोग किया है।उनकी उलटवासियां पढने एवं सुनने में कुछ अटपटी लगती है किन्तु उसमें निहित गहन अर्थ बहुत सटीक होता है।। जैसे –चौगोडा के उखते व्याधा भागहिं जाय। यहाँ चकोङा शिकार है और व्याधा शिकारी है। प्रायः शिकारी को देखकर खरगोश आदि भाग जाते है किन्तु यहाँ तो उलटा हो रहा है चौगोडा अर्थात शिकार को देखकर शकारी ही भाग जाता है प्रत्येक जीव को विषयवासनाओं ने अपने वश मै कर लिया है। सत्संगति एवं संतो के सानिध्य से जब जीव को ज्ञान हो जाता है तो-कामादि शिकारी स्वयं भाग खडे. होते है। यहाँ चौगोडा जीव है व्याध –कामादि है वासनाएं हैं। इसी प्रकार – कबीरदास के उलटी वाणी ,,बरसै कम्वल भीजै पानी ,, ॥ नैया बीच नदिया डूबी जाय आदि कहा है। कबीरदास ने अपने आध्यात्मिक अभिवावित में प्रतीकों का आक्षय लिया है। साधनात्मक प्रतीक का एक उदाहरण –

 ISSN – 2349-3100

लम्बा मारग दूरि घट विकट पथ बहुमार।
कह संतो क्यो पाइए , दुर्लभ हरि दीदार॥

मुहावरे एवं लोकोक्तियों का विदान –मुहावरे एवं लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा में प्रोदाता एवं चमत्कार की सृष्टि होती है। इनके प्रयोग से का समाज के प्रेरणा आंरिवन देखी थी। वे लोकभाषा के समर्थक थे एवं लोक जीवन में प्रचलित मुहावरें एवं लोकोक्तियों का खुलकर प्रयोग किया। सभी धर्मो में व्याप्त कुरीतियों पर खुलकरप्रहार किया है – बोए पेड बबूर का तो आम कहाँ से होई। पांव कुल्हाडी मारिया मूरख अपने हाथ॥ कबीरदास की भाषा में जहाँ एक ओर सादगी है वहींदूसरी ओर प्रतीकात्मक प्रतीक होता है।

छन्द विधान – छन्द एवं गुण प्रयोग की दृष्टि से कबीरदास ने दोहा छन्द का प्रयोग अधिक किया है। दोहा छन्द में कबीर के भावों का अभिव्यक्ति स्वाभाविक बन पडी है। बीजक एक मान ग्रन्थ है जिसमें साखी , सबड , रमैनी समलित है। सबद एवं रमैनी गानें के पद है। कबीर के काव्य में जहाँ पर विरह वर्णन हुआ है वहाँ प्रसाद गुण का सम्मिश्रण है एवं प्रेमाभिव्यक्ति में माधुर्य गुण की प्रधानता है साथ ही हठयोग साधना के पदों में ओजगुण दिखाई देता है। अतः कहा जा सकता है कि अपने भावों सहज अभिव्यक्ति में कबीरदास ने सभी भाषाओं का प्रयोग किया है। कबीर की भाषा अपनी वैज्ञानिकता , कवित्वशक्ति की सम्पन्नता एवं लोकव्यवहार की दृष्टि से अधिक प्रासंगिक है। कबीर का सम्पूर्णज्ञान नैसर्गिकप्रतिभा , सत्संगति तथा अनुभूति पर आधारित था जो सहजभाषा में अभिव्यक्त हुआ है।

सन्दर्भ

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास – आ . रामचन्द्र शुक्ल पृ . सं .-44

2 कबीर –आ .हजारीप्रसाद द्विवेदी पृ . सं .- 170

3 कबीर – आ . हजारीप्रसाद द्विवेदी पृ . सं .-270

4 कबीर साखी सुधा डॉ. वासुदेव सिंह ,पृ . 45

5 कबीरकी भाषा भोलानाथ,पाठक तिवारी सं विपेन्द्र – 242

6 हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास रामस्वरूप चतुर्वेदी , पृ -40

7 हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. जयनारायण वर्मा

8 हिन्दी भाषा और साहित्य कृतियाँ – रवि कुमार मजुमदार

9 हिन्दी साहित्य का आदिकाल –हजारी प्रसाद द्विवेदी

10 कबीर मीमांसा – रामचन्द्र तिवारी

11 कबीर साहित्य की परख – परशुराम चतुर्वेदी

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थान क.जे सोमैया संस्कृत विद्यापीठ,मुम्बई

 ISSN – 2349-3100

A Comparative study of Mental Health between Tribal and Urban Senior College Students Mumbai University

✍**Dr. M. S. Gomchale**
Sports Director, Akhadabalapur College,
S.R. T. M. University, Nanded.

✍**Andhale Shankar Baburao**
Ph.D Research Scholar,
Dept. of Physical Education
S.R.T.M. University, Nanded.

.

Introduction:

The concept of mental health is as old as human being. In recent years clinical psychologists as well as educationists have started giving proper attention to the study of mental health. However, in india, relatively very few work has been conducted.

Mental health as defined by Kotnhauser (1965) connotates those behaviours, perceptions and feelings that determine a person's overall level of personal effectiveness, success, happiness and excellence of functioning as a person. It depends on the development and retention of goals that are neither too high nor too low to permit realistic successful maintenance of belief in one's self as a worthy, effective human-being (Lakshminarayanan & Prabhakaran, 1993). So a mentally healthy person is firm in his intentions and is least disturbed by strains and stresses on day-to-day life.

Concept of Mental Health:

Mental health is vital for individuals, families and communities, and is more than simply the absence of a mental disorder. Mental health is defined by the World Health Organization (WHO) as 'a state of well-being in which the individual realizes his or her own abilities, can cope with the normal stresses of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to his or her community'.

Need of study:

A review of related literature indicates that in Indian context Mental Health has been studied at different level i.e. at school level, higher secondary level but very few researches found at senior level.

Hence researcher is going to study the comparative study of mental health of university level senior college students.

Many researches were done separately on mental health but a comparative study especially in between tribal and urban locality are not done which gives great scope and opportunity to this research. Hence, the researcher selected this topic for research. After taking a retrospective look at the past research, the researcher found a direction for carrying out her research on the said topic.

Title of the study: "A Comparative study of Mental Health between Tribal and Urban Senior College Students Mumbai University"

Variable of the study: Mental Health: Mental health involves continuous adjusting rather than a static condition and is therefore a progressive goal. It is ability to cope the present and in all likelihood to adjust satisfactorily in the future.

 ISSN – 2349-3100

Sub-Variables of the study: 1. Emotional Stability: Emotions are defined as an acutely disturbed affective process or state which originates in the psychological situation and which is revealed by marked bodily changes in smooth muscles, glands and gross behaviour. **2. Over-all Adjustment:** The ability of humans to survive in stressful environments by non-genetic means. Originally, adjustment, was regarded as little more than the avoidance of male-adjustment but then became a goal for therapy with the emergence of the humanistic approaches to psychotherapy. **3. Autonomy:** Independence ability to act according to one's own priorities or principles without being overwhelmed by external constrains or internal pressures such a unwanted but uncontrollable desires. Kant's classic definition of enlightenment also defines intellectual autonomy. Enlightenment is "man's emergence from his self-incurred immaturity. **4. Security-Insecurity:** Refers to a sense of safety, confidence, and freedom from apprehension, which is believed to be engendered by such factors as warm, accepting parents and friends, development of age-appropriate skills and abilities, and experiences that build ego strength. **5. Self-concept:** A self-concept is a global evaluation made about one's own personality. It is derived from the subjective evaluations we tend to make of our own behavioural traits. **6. Intelligence:** In general, the ability of an individual to understand the world and work out appropriate courses of action.

Aim of the study: To study and compare Mental Health of Tribal and Urban senior college students of Mumbai University.

Objectives of the study:

1. To study the mental health of senior college students of Mumbai University.
2. To compare the mental health of tribal and urban senior college students of Mumbai University.

Hypothesis of the study: There is no significant different between the mental health of tribal and urban senior college of Mumbai University.

Scope and Delimitation:

The study will include senior college students only. It will exclude Junior college and post graduate students from its preview. It will include students learning in senior colleges of Mumbai University only and not from any other University of Maharashtra. The present study will help to know about the mental health of tribal and urban senior college students of Mumbai University.

It will help to improve mental health of tribal and urban senior college students. College specially can take advantage development programme for improvement of mental health. Mental Health of tribal and urban students will be compare on the basis of Emotional Stability, Over-all Adjustment, Autonomy, Security-Insecurity, Self-concept and Intelligence this factors only.

Methodology of the study:

The study will used the descriptive method in that survey and comparative method were used. The study will compared urban and tribal senior college students on the basis of Emotional Stability, Over-all Adjustment, Autonomy, Security-Insecurity, Self-concept and Intelligence factors of Mental Health.

Sample of the study:

The study will include 376 senior college students from university of Mumbai. Among that 196 students from urban area colleges and 180 students from tribal area colleges. Four districts are

 ISSN – 2349-3100

selected namely Thane, Raigad, Palghar and Mumbai. The sample will be selected by using three stage sampling technique.

Tools of the study:

Sl. No.	Component	Test	Time & Score
1	The Mental Health Inventory (MHI-38)	Arun kumar singh and Alpana Sengupta	Score

Techniques of Data Analysis:

The researcher used following statistical techniques for the data analysis. 1. Measures of central tendency (Mean), 2. Measures of variability (standard deviation), 3. Graphical presentation and 4. 't' test

Significance of the study:

1. The present study will help to know about the mental health of tribal and urban senior college students of Mumbai University.
2. The present study will help to improve mental health of tribal and urban senior college students.
3. College specially can take advantage development programme for improvement of mental health.

Data analysis and interpretation:

TABLE 1

Comparison of Mental Health 'B' Section between Total Urban and Tribal College level Students.

Group	No's of Students	Mean	Standard Deviation	Standard Error of Difference	Degree of freedom	Tabulated Value		t-value	Level
Urban Students	196	83.37	9.86	0.971	374	0.05	0.01	2.62	0.01
Tribal Students	180	80.83	8.89			1.97	2.59		

*Significant at set 0.01 (Tabulated value 2.59)

As per Table 1 it is observed that the mean of total urban and tribal students is 83.37 and 80.83 and the t-ratio are statistically analysed as (t = 2.62). Obtain value is greater than Tabulated Value, Hence there is significant difference, at 0.01 level. Thus the hypothesis is rejected.

The above data of Mental Health are presented in following Figure 1.

FIGURE 1

Figure showing the Mean and Standard Deviation, difference between Total Urban and Tribal College level Students in Mental Health

ISSN – 2349-3100

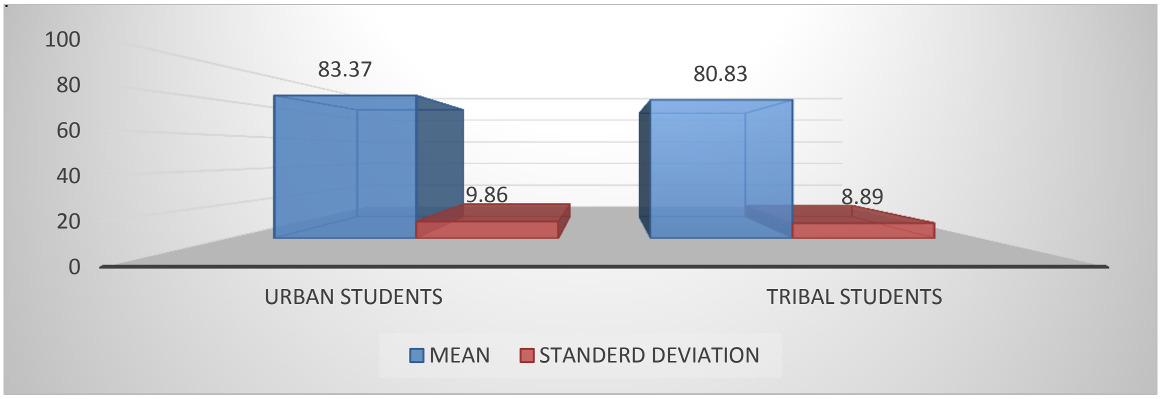

Findings: There is significant difference in mental health between urban and tribal students at 0.01 level.

Conclusion: The Mental Health of Urban colleges students is rarely good than Tribal colleges students.

Major Recommendation:

1. Students should focus on their diet, as well as on exercise.
2. Colleges should be organise various kind of counselling programme based on Mental health.
3. Good study habits can be inculcate through various activities.
4. Balancing daily routine programme.
5. Make familiar to students for 'Stress management'.

Suggestion for Further study:

1. Similar studies may be under taken for different age groups in both sexes at different levels.
2. Similar studies can be conducted with the same variables by selecting the subjects from other environmental aspects.
3. The similar study may be conducted for school boys and girls at different age groups.
4. The similar study may be conducted on sports players.
5. A similar study could be investigated among the students between two or more areas.

Bibliography:

Clarke, David H. and Harrison H. Clarke, (1989). **Application of Measurement Health and Physical Education,** New Jersey: Englewood cliffs Prentice Hall Inc.

Kothari C.R. (2010). **Research Methodology methods and techniques**, New age international (p) limited, publishers, New Delhi. P. 1

Kuppuswamy B., (2013). **Advanced educational psychology**, Sterling publishers private limited, New Delhi,,

Ostrow, A.C. (1996). **Directory of Psychological Test in the Sport and Exercise Sciences**, 2nd edition. Fitness information Technology, Morgantown, WV (USA)

Shukla, K. C., (2005). **Encyclopaedic dictionary of psychology**, Commonwealth publishers, New Delhi, Vol 1,2,3.

WHO,(2008). **Mental Health Gap Action Programme. Scaling up care for mental, neurological, and substance use disorders.** Geneva: World Health Organization.

 ISSN – 2349-3100

Problem solving ability in Physics with special reference to analysis of data – A Survey on Secondary School Students.

✍ * Thushara Murali & **Dr. K.Rajagopalan

The modern world is a scientific world and today science is everybody's concern. At this stage we cannot think of a world without science. In Joseph Gallant's words ''The most conspicuous aspect of our civilization today is the pervasive and ramifying impact of science in every department of life, from household management to welfare". In view of the dominating role of science in the modern world, it has been imperative for any nation of the world to promote science education in their country. To meet the growing demands of different nation urgent steps are being taken by them to revitalize science education .

Problem solving is a mental process that involves visualization ,imagination abstraction and the association of ideas. It is deliberate or purposeful act on the part of an individual to fulfil the set goals by discovering some new ideas or systematically following some planned steps for hindrances in the path. It helps the students to attain mastery on the process that can use again and again.

NEED AND SIGNIFICANCE OF THE STUDY

The modern era is the era of Science. Due to advancement of science and technology, modern society is becoming more complex. Multidimensional problems are emerging in it. Society needs a large number of skilled persons who can contribute significantly for its development by providing solution to those emerging problems. In fact effective problem solving is not only essential for survival of the society, it is equally important for future of the society . Students are the future citizens and utilization of their potential influence progress of the nation . Therefore development of students' problem solving ability is one of the needs of the hour.

***Research Scholar, MSN University ,Tirunelveli.**

**** Asso.Professor,NSS Training College , Ottappalam, Kerala (Retd)**

OBJECTIVE OF THE STUDY

The main objective of the study is

- **To find out the problem solving ability in physics with special reference to analysis of data for secondary school students.**

METHOD

Participants

The investigator has chosen 100 secondary school students from Thrissur district, 50 each from boys and girls ,70 from urban and 30 from rural sector .

Table -1 Number of students

Sl.No	Category	N	Total
1	Boys	50	100
2	Girls	50	
3	Urban	70	
4	Rural	30	

Instruments

Problem solving ability consists of number of sub components such as recognising a problem, identifying a mathematical problem, analysis of data, evaluation ,generalization etc. The present study

 ISSN – 2349-3100

gave importance to analysis of data. The test in physics consists of 20 test items based on the dimension analysis of data .

Procedure

The tool was administered on the sample and responses were collected accordingly. Score '1' for right answers and '0' for wrong answers. Data were consolidated on the basis of total sample and relevant sub samples. Descriptive statistical values of the data were calculated.

Results

The important statistical constants such as mean , median, mode , standard deviation , skewness and kurtosis of the variables were calculated.

Table 2

Basic descriptive Statistical Constants of the Variables for the Total Sample.

Variables	N	Mean	Median	Mode	S.D	Skewness	Kurtosis
Problem Solving Ability	100	12.23	12.5	13	4.2016	-0.38012	0.13125

The mean scores for the variable problem solving ability with special reference to analysis of data is 12.23 where as the median , mode , standard deviation ,skewness and kurtosis were found to be 12.5, 13, 4.2016, -0.38012 and 0.13125respectively.

The mean scores obtained for the variable on the basis of sex and locale was compared to examine whether there exist a significant difference.

Table 3

Results of Test of Significance for the difference between mean scores of Problem Solving Ability on the basis of Sex and Locale.

Sl no.	Category	N	Mean	S.D	t value
1	Boys	50	11.66	4.475	0.1761
2	Girls	50	12.8	3.870	
3	Urban	70	12.44	4.231	0.4418
4	Rural	30	11.73	4.160	

It can be seen from the Table 3 that the obtained 't' value is found to be not significant even at 0.05 level. So it can be noted that there is no significant difference in the mean scores of boys and girls and that of rural and urban pupil with respect to problem solving ability with special reference to analysis of data.

Conclusion

The present study revealed that the critical ratio obtained for the test of significance of mean difference with respect to sex and locale are not significant even at 0.05 level .This indicates that problem solving ability in physics with special reference to analysis of data of boys and girls are same. This study also indicates that there is no difference between urban and rural pupils with respect to problem solving ability in physics.

REFERENCES

Best ,J.W.& Khan ,J.V.(1995).*Research in Education.* New Delhi; Prentice Hall of India Pvt .Ltd.

Buch, M.B .(1986).*Third Survey of Research in Education.* New Delhi; NCERT.

Gallent , Joseph .(1960). *Impact of Modern technology.* Boston ;Becon Press.

Mayor R.E. (1983). *Thinking ,Problem Solving , Cognition.* NewYork; WH Freeman and co.

Parasnis, H.N. (1990). *Developing of a Problem Solving Ability test for students of standard ix.* Independent study. Pune. SCERT. In Fifth Survey of Educational Research. (1997). Volume 11. N.C.E.R.T. New Delhi.

SCERT Kerala ix standard Text Book.

Vaidya, N. (1968). *Problem solving in Science.* S. Chand & Co. New Delhi

ISSN – 2349-3100

Study center of Sanskrit

✍Dr.Ashish kumar choudhary

ASSAM

  - Gauhati University, Gauhati
- Andhra Pradesh
  - Andhra Pradesh State Government Oriental Manuscripts Library and Research Institute, Osmania University, Hyderabad(MRC)
  - Andhra University, Visakhapatnam
  - Rashtriya Sanskrit Vidyapeetha, Tirupati
  - Sanskrit Academy, Osmania University, Hyderabad
  - Sri Venkateswara Oriental Research Institute, Tirupati (MRC / MCC)
  - Sri Venkatesvara Vedic University, Tirupati
- Assam
  - Gurucharan College, Silchar (MRC)
- Bihar
  - K. P. Jaiswal Research Institute, Patna
  - Kameshvar Singh Darbhanga Sanskrit University, Darbhanga(MRC)
  - Mithila Research Institute, Darbhanga
  - Patna University, Patna
  - Shri Dev Kumar Jain Oriental Research Institute, Arrah (MRC / MCC)
- Goa
  - Gomantak Samstritottejak Mandals Shankar Pathasala, Kavelam Ponda
  - Gomantak Sanskrit Parishad, Mandal
- Gujarat
  - B. J. Institute of Learning and Research, Ahmedabad
  - Lalbhai Dalpatbhai Institute of Indology (MRC)
  - Oriental Institute, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Baroda
  - Sanskrit Mahavidyalaya, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Baroda
  - Sardar Patel University, Vallabh Vidyanagar
  - Shree Somnath Sanskrit University, Junagarh
  - University School of Languages, Gujarat University, Ahmedabad
- Haryana
  - Faculty of Indic Studies, Kurukshetra University, Kurukshetra(MRC)
- Himachal Pradesh
  - Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Shimla (MRC)
- Jammu and Kashmir
  - Central Institute of Buddhist Studies, Choglamsar Leh (MRC / MCC)
  - Directorate of State Archaeology, Archives & Museum, Srinagar (MRC)
  - Shri Ranbir Research Institute, Jammu
  - University of Jammu, Jammu
  - University of Kashmir, Srinagar
- Karnataka
  - Academy of Sanskrit Research, Melkote
  - Central Institute of Indian Languages, Manasagangotri, Mysore
  - Kannada University, Hampi (MRC)

 ISSN – 2349-3100

  - Karnatak University, Dharwad
  - Keladi Museum and Historical Research Bureau, Keladi (MRC)
  - Mahabharata Samshodhan Pratishthan, Bangalore (MRC)
  - National Institute of Prakrit Studies & Research, Shravanabelagola (MRC)
  - Oriental Research Institute, University of Mysore, Mysore (MRC)
  - S.M.S.P. Sanskrit College, Mysore
- Kerala
  - Government Sanskrit College, University of Kerala, Thiruvananthapuram
  - Oriental Research Institute and Manuscripts Library, University of Kerala, Thiruvananthapuram (MRC)
  - Sree Sankaracharya University of Sanskrit, Kalady
  - Sukrtindra Oriental Research Institute, Cochin
  - University of Calicut, Calicut
- Madhya Pradesh
  - Government Maharaja P. G. College, Chhatarpur
  - Government Sanskrit College, Indore
  - Dr. Harisingh Gour University, Sagar (MRC)
  - Kundakunda Jnanapitha, Indore (MRC)
  - Maharshi Panini Sanskrit University, Ujjain
  - Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur
  - Scindia Oriental Research Institute, Vikram University, Ujjain(MRC / MCC)
- Maharashtra
  - Anandashram Sanstha, Pune (MRC)
  - Asiatic Society of Mumbai
  - Bhandarkar Oriental Research Institute, Pune (MRC / MCC)
  - Deccan College Post-graduate and Research Institute, Pune
  - Gama Oriental Research Institute, Bombay
  - Institute for Oriental Study, Thane
  - Kavikulguru Kalidas Sanskrit University, Ramtek (MRC)
  - Rashtrasant Tukadoji Maharaj Nagpur University, Nagpur
  - Poona Vidyapeeth, Pune
  - Tilak Maharashtra Vidyapeeth, Pune
  - Centre of Advanced Study in Sanskrit, University of Pune, Pune
  - University of Mumbai, Mumbai
- Orissa
  - Orissa State Museum, Bhubaneswar (MRC / MCC)
  - Sambalpur University Library, Sambalpur (MCC)
  - Sanskrit Academy of Research for Advanced Society through Vedic and Allied Tradition of India (SARASVATI), Bhadrak (MRC)
  - Sanskrit College, Parlakhemudi
  - Shri Jagannath Sanskrit Vishvavidyalaya, Puri
  - Utkal University, Bhubaneswar
- Punjab
  - Panjabi University, Patiala
  - Vishveshvaranand Vishwa Bandhu Institute of Sanskrit and Indological Studies, Punjab University, Hoshiarpur (MRC / MCC)
  - Vishveshvaranand Vedic Research Institute, Hoshiarpur
- Rajasthan
  - Jagadguru Ramanandacharya Rajasthan Sanskrit Vishvavidyalaya, Jaipur

ISSN – 2349-3100

- Prahya Vidya Pratishthan, Jaipur
- Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur (MRC / MCC)

- Tamil Nadu
    - The Adyar Library and Research Centre, Adyar, Chennai
    - Annamalai University, Annamalai Nagar
    - The Kuppuswami Sastri Research Institute, Mylapore, Chennai
    - Presidency College, Chennai
    - Sri Chandrashekharendra Saraswati Viswa Mahavidyalaya, Kanchipuram (MRC)
    - Tanjore Maharaj Serfojis Sarasvati Mahal Library, Thanjavur (MRC / MCC)
    - University of Madras, Chennai
    - Vivekananda College, Chennai
- Uttar Pradesh
    - Akhila Bharatiya Sanskrit Parishad, Lucknow (MRC)
    - Allahabad University, Allahabad
    - Aligarh Muslim University, Aligarh
    - Faculty of Sanskrit Vidya Dharmavijnana, Banaras Hindu University, Varanasi (MCC)
    - Kashi Vidyapeeth, Varanasi
    - Rashtriya Sanskrit Sansthan, Ganganath Jha Campus, Allahabad
    - Sampurnanand Sanskrit Vishvavidyalaya, Varanasi (MRC)
- Uttarakhand
    - H.N.B. Garhwal University, Pauri Garhwal (MRC)
    - Uttaranchal Sanskrit Academy, Haridwar (MRC)
- West Bengal
    - The Asiatic Society (Kolkata)
    - University of Burdwan, Burdwan
    - Jadavpur University, Kolkata
    - The National Library, Kolkata
    - Sanskrit College, Howarah
    - Sanskrit College, Kolkata
    - University of Calcutta, Kolkata (MRC / MCC)
    - Vishva Bharati University, Shanti Niketan
    - Vrindavan Research Institute, Vrindavan (MRC / MCC)
- Delhi
    - Archaeological Survey of India, New Delhi (epigraphy)
    - Bhogilal Leherchand Institute of Indology, New Delhi
    - Indian Council of Historical Research, New Delhi
    - Indian Council of Philosophical Research, New Delhi
    - Indira Gandhi National Centre for the Arts, New Delhi (IGNCA) (MCC)
    - National Archives of India, New Delhi
    - National Mission for Manuscripts, New Delhi
    - National Museum of India, New Delhi
    - Rashtriya Sanskrit Sansthan, New Delhi
    - Shri Lal Bahadur Shastri Rashtriya Sanskrit Vidyapeetha, New Delhi
- Puducherry
    - French Institute of Pondicherry, Pondicherry (MRC)
    - Pondicherry University, Pondicherry

asst.prof. dept.of jyotish rsks mumbai